जैन कौन ?

जिन के उपासक जैन कहलाते हैं, जिन राग-द्वेष के विजेता होते हैं, अतः राग-द्वेष के विजेता की उपासना से तात्पर्य राग-द्वेष को घटाना है। अर्थात् जो राग-द्वेष, क्रोध, मान, माया लोभ आदि विकारों को घटाने के लिए प्रयत्नशील रहता है, वह जैन है। जिस प्रकार शैव का देवता शिव, बौद्ध का बुद्ध तथा वैष्णव का विष्णु है उसी प्रकार जैन के परम आराध्य देव जिन होते हैं अर्थात् अरिहन्त सिद्ध आदि जिन की उपासना करने वाले जैन कहलाते हैं।

जो प्रत्येक प्रवृत्ति में सावधानी एवं विवेक को प्रधानता देता है एवं जिनेश्वर देवों की आज्ञा को आगे रखकर चलता है, वह जैन है।

देव

जैन धर्म विश्व का एक महान् धर्म है। इसकी आधारशिला भौतिक विजय पर नहीं, आध्यात्मिक विजय पर है। यह धार्मिक क्रियाओं के साथ मुख्य रूप से अन्दर में आत्मा का धर्म है। अतः हमारे देव भी आत्मा के शुद्धतम स्वरूप को प्राप्त करने वाले महापुरुष हैं। राग-द्वेष के विजेता, ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप आत्म-गुणों में रमण करने वाले जिन, हमारे देव हैं।

जिन शब्द का अर्थ है विजेता। जिन शब्द जैन-दर्शन का पारिभाषिक शब्द है, जो अरिहंत, तीर्थंकर एवं केवली के लिये प्रयुक्त होता है।

जिन का स्वरूप-

राग-द्वेष रूपी आन्तरिक शत्रुओं के विजेता, घाती कर्म रूपी रजमेल से रहित, बुढ़ापा एवं मृत्यु से रहित, केवलज्ञान एवं केवल दर्शन के धारक, जगत के जीवों का एकान्त हित चाहने वाले परमात्मा को जिन कहते हैं।

जिन भगवान् न स्तुति करने से प्रसन्न होते हैं और न ही निन्दा करने से नाराज होते हैं। लेकिन हम अपने आदर्श के रूप में उनको मानकर साधना करते हैं, क्योंकि हमारा लक्ष्य परम सुख को प्राप्त करना, अनंत सुख को प्राप्त करना है, अतः हमारा आदर्श भी वैसा ही होना चाहिये।

जैन धर्म संसार के क्रोधी, मानी, मायावी और लोभी देवताओं को अपना इष्ट देव नहीं मानता। क्योंकि जो स्वयं विकार ग्रस्त हैं, वे हमें क्या विकार रहित बना सकेंगे? जो अपनी रक्षा के लिये अस्त्र-शस्त्र रखते हों, जो काम के वशीभूत होकर स्त्री का संग करते हों, वे हमारे आदर्श नहीं हो सकते।

जैन धर्म की यह दृढ़ मान्यता है कि कोई भी बाहरी व्यक्ति हमें सुखी या दुःखी नहीं बना सकता है, अतः बाहर में न कोई हमारा शत्रु है, न कोई हमारा मित्र है। काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ आदि आन्तरिक शत्रु ही बाहरी शत्रु बनाते हैं। अतः हमारी साधना- आराधना-उपासना, भक्ति का लक्ष्य ही इन आन्तरिक शत्रुओं को समाप्त करना है। अतः इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए इन शत्रुओं के विजेता जिन, अर्हत् ही हमारे इष्टदेव, देवाधिदेव होने चाहिये।

जैन धर्म व्यक्ति पूजक नहीं, गुणपूजक धर्म है, इसलिए वह केवल अपने सम्प्रदाय या ग्रंथों में वर्णित वीतरागी आत्माओं को भगवान् मानता हो, यह बात नहीं है। विश्व के जो भी साधक राग-द्वेष को पूर्ण रूप से जीतकर कर्ममल को क्षय कर हमेशा के लिये बन्धन मुक्त हो जाते हैं, वे सब हमारे आराध्य देव हैं।

हमारे देव दो प्रकार के हैं-

1. सशरीरी अरिहंत देव; व **2. अशरीरी सिद्ध भगवन्त।**

आत्म-गुणों की अपेक्षा आध्यात्मिक योग्यता की दृष्टि से दोनों में कोई अन्तर नहीं है। लेकिन अरिहंत भगवान् ने चार घाती कर्मों का क्षय किया तथा वे शरीर सहित हैं। जबकि सिद्ध परमात्मा ने सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर दिया, उन्हें कुछ भी करना शेष नहीं है। आन्तरिक योग्यता की दृष्टि से दोनों में कोई अन्तर नहीं होने पर भी प्रत्यक्ष उपकारी होने से अरिहंत को सर्वप्रथम नमस्कार किया गया है तथा उन्हें देवाधिदेव कहा गया है। क्योंकि वे ही सिद्ध के स्वरूप का ज्ञान कराते हैं तथा जन से जिन बनने का, जीव से शिव, आत्मा से परमात्मा बनने का मार्ग बताते हैं।

इस प्रकार राग-द्वेष के विजेता, कर्ममल रहित, जरा (बुढ़ापा) मरण से रहित, अनंत आत्मसुखों में लीन, अरिहंत व सिद्ध हमारे देव हैं, हमारे आदर्श हैं।

प्रश्नोत्तर : देव सम्बन्धी

प्र.1 जैन धर्म में देव किसे कहा गया है?

उत्तर- अरिहंत व सिद्ध भगवान को देव कहा गया है।

प्र.2 अरिहंत किसे कहा गया है?

उत्तर- अरि = शत्रु, हंत = नाश करने वाले। अर्थात् जिन्होंने आन्तरिक शत्रुओं का नाश कर दिया है, उन्हें अरिहंत कहते हैं।

प्र.3 आन्तरिक शत्रु किसे कहा गया है?

उत्तर- काम, क्रोध, मद, लोभ, राग-द्वेष आदि आन्तरिक शत्रु कहे गये हैं।

प्र.4 तो क्या अरिहंत के बाहरी शत्रु होते हैं?

उत्तर- अन्दर विद्यमान आन्तरिक शत्रु ही बाहरी शत्रुओं का निर्माण करते हैं। जब आन्तरिक शत्रु नहीं होते हैं तो बाहर में कोई भी शत्रु नहीं होता है।

प्र.5 अरिहंत को अन्य किन-किन नामों से पुकारा जाता है?

उत्तर- जिन, वीतराग, सर्वज्ञ, तीर्थंकर, अर्हन्, अरहन्त, अरुहन्त, विहरमान आदि सार्थक नामों से पुकारा जाता है।

प्र.6 अरिहन्तों को जिन क्यों कहा गया है?

उत्तर- अरिहंत राग-द्वेष के विजेता होने से उन्हें जिन कहा गया है।

प्र.7 अरिहन्तों को वीतराग क्यों कहा गया है?

उत्तर- राग-द्वेष आदि कषायों से रहित होने के कारण उन्हें वीतराग कहते हैं।

प्र.8 राग-द्वेष किसे कहते हैं?

उत्तर- अनुकूल व्यक्ति, वस्तु अथवा परिस्थिति को पाकर प्रसन्न होना 'राग' कहलाता है, जबकि प्रतिकूल व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति को पाकर अप्रसन्न (नाराज) होना 'द्वेष' कहलाता है।

प्र.9 नमस्कार मंत्र में पहले अरिहन्तों को नमस्कार क्यों किया गया हैं?

उत्तर- अरिहन्त भगवान् चतुर्विध संघ रूप धर्म को प्रकट कर मोक्ष की राह दिखाने वाले और सिद्धों का स्वरूप बतलाने वाले होने से महान् उपकारी हैं। जन्म-मरण के भव-बन्धनों को समाप्त करने का उपाय अरिहन्त भगवान् ही बतलाते हैं, अतः नमस्कार मंत्र में सर्वप्रथम अरिहन्तों को नमस्कार किया गया है।

प्र.10 हम अरिहंत बन सकते हैं?

उत्तर- हाँ, हम भी घाती कर्मों को क्षय कर अरिहंत बन सकते हैं।

प्र.11 अरिहंत ने कौन-कौनसे कर्मों का क्षय किया?

उत्तर- अरिहंत ने ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय एवं अन्तराय इन चार घाती कर्मों का क्षय कर दिया।

प्र.12 क्या अरिहंत प्रसन्न होकर वरदान देते हैं?

उत्तर- अरिहंत न तो किसी पर प्रसन्न होते हैं और न ही नाराज। अतः वरदान और अभिशाप दोनों ही नहीं देते हैं।

प्र.13 हम अरिहंत को आराध्य देव क्यों मानते हैं?

उत्तर- हमारा लक्ष्य अनंत सुख को प्राप्त करना है, अतः हमारा आदर्श भी अनंत सुखों में लीन परमात्मा होना चाहिये। अरिहन्त भगवान् अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र और अनन्त बलवीर्य के धारक होते हैं। इसलिए हम अरिहन्तों को आराध्य देव मानते हैं।

प्र.14 क्या अरिहंत हमें सुखी व दुःखी बना सकते हैं?

उत्तर- अरिहंत हमें सुखी अथवा दुःखी नहीं बना सकते हैं, लेकिन वीतराग प्रभु की साधना से, भक्ति से हमारे विकार (राग, द्वेष) कम होते हैं, जिससे हम स्वतः सुख व शान्ति का अनुभव करते हैं।

प्र.15 सिद्ध किसे कहते हैं?

उत्तर- जिन्होंने आत्मा पर लगे आठों कर्मों को, राग-द्वेष आदि भाव कर्मों को तथा शरीरादि कर्मफल को जड़मूल से समाप्त कर दिया है तथा जो अनन्त-शाश्वत सुख रूप सिद्धालय में सदाकाल विराजमान हैं, उन्हें सिद्ध कहते हैं। ये अरूपी होने से, शरीरादि रहित होने से धर्मोपदेश आदि की प्रवृत्ति से भी रहित होते हैं।

प्र.16 जब सिद्ध भगवान् धर्मोपदेश नहीं देते तो फिर उनकी स्तुति से क्या लाभ?

उत्तर- सिद्ध भगवान् की स्तुति करने से परम शान्ति का अनुभव होता है। शुद्ध आत्म स्वरूप-निज स्वरूप का बोध होता है तथा हमारे भीतर भी सिद्ध बनने की प्रभावी प्रेरणा जागृत होती है।

प्र.17 अरिहंत व सिद्ध में क्या भेद है?

उत्तर-
1. अरिहन्त भगवान सशरीरी होते हैं, जबकि सिद्ध अशरीरी होते हैं।
2. अरिहन्तों ने चार घाती कर्म क्षय किये हैं, जबकि सिद्धों ने आठों ही कर्म क्षय कर दिये हैं।
3. अरिहन्त भगवान धर्म का उपदेश देते हैं, मोक्ष का मार्ग बतलाते हैं तथा सिद्धों का स्वरूप बतलाते हैं, जबकि सिद्ध अशरीरी होने से ऐसी कोई प्रवृत्ति नहीं करते।

प्र.18 अन्य सरागी देवों से अरिहंत व सिद्धों में क्या भिन्नता है?

उत्तर- अन्य सरागी देवों में आन्तरिक विकारों के होने से, भय एवं काम के होने से वे अस्त्र-शस्त्र एवं स्त्री आदि बाह्य वस्तुओं से युक्त होते हैं, जबकि अरिहंत एवं सिद्धों में विकार नहीं होने से वे किसी भी प्रकार के शस्त्र से तथा स्त्री आदि से रहित होते हैं।

गुरु

भारतीय संस्कृति में गुरु का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वैदिक संस्कृति में गुरु के पद को देव से भी ऊँचा व श्रेष्ठ माना गया है। तभी कहा गया है -

गुरु गोविन्द दोनों खडे, काके लागूँ पाँय।
बलिहारी गुरु आपकी, गोविन्द दियो बताय।।

देव के स्वरूप का ज्ञान कराने वाले होने से गुरु को प्रथम वन्दनीय कहा गया है। 'गुरु' शब्द का शाब्दिक अर्थ है बड़ा या भारी अर्थात् जो ज्ञानादि गुणों में एवं आचार में बड़ा हो, उसे गुरु कहते हैं।

मानव मन के अज्ञान अन्धकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाले महापुरुष को गुरु कहते हैं। गुरु भोगविलासों में भूले भटके मानव को सत्य के दर्शन कराता है।

गुरु का बहुत महत्त्व है, यह तो निर्विवाद सत्य है, लेकिन महत्त्व सच्चे गुरु का है, सच्चे गुरु के क्या लक्षण हैं? जैन धर्म में सच्चा गुरु किसे कहा गया है? इन प्रश्नों पर विचार करना आवश्यक है।

जैन धर्म गुण पूजक धर्म है, शरीर व वेष पूजक नहीं। जैन धर्म ज्ञान-दर्शन युक्त चेतना स्वरूप वाले आत्म-देव का पूजक है। अतः जैन धर्म में सच्चे गुरु का स्वरूप बताते हुए कहा गया है-

"जो धन-दौलत का त्यागी हो, सांसारिक प्रपंचों से रहित हो, अहिंसादि पंच महाव्रतों का दृढ़ता से पालन करता हो तथा आत्मा से परमात्मा बनने के आदर्श को सामने रखकर आत्म-साधना करता हो, बिना किसी लोभ-लालच के जन-कल्याण की भावना से उपदेश देता हो, उसे सच्चा गुरु कहते हैं।

जैन साधुओं का तप की दृष्टि से बड़ा महत्त्व है, उनका जीवन त्याग की प्रतिमूर्ति है। वे कनक (धन-दौलत) कामिनी (स्त्री) के त्यागी, पैदल चलने वाले, सचित्त के त्यागी, छः काय के रक्षक, पाँच समिति, तीन गुप्ति के पालक होते हैं। माँस-मछली आदि अभक्ष्य के त्यागी होने के साथ ही शराब, गांजा, भाँग, बीड़ी, सिगरेट, पान-तम्बाकू आदि सभी प्रकार के नशीले पदार्थों के त्यागी तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य के पालक होते हैं तथा वे अनेक घरों से भिक्षाचरी (गौचरी) करते हैं, सूर्यास्त के पश्चात् अन्न एवं जल को न तो ग्रहण करते हैं और न रखते हैं। सूई जितनी भी कोई धातु अपने पास नहीं रखते हैं। रुपया, पैसा, मठ-मन्दिर आदि किसी प्रकार की सम्पत्ति नहीं रखते हैं।

जैन साधुओं के पाँच महाव्रत बतलाये गये हैं, जो प्रत्येक साधु को चाहे वह छोटा हो या बड़ा, अवश्य पालन करने होते हैं-

1. **अहिंसा-** मन, वचन एवं शरीर से छोटे या बड़े, त्रस या स्थावर किसी भी प्रकार के जीव की हिंसा न करना, न करवाना तथा न करने वालों का समर्थन करना।
2. **सत्य-** मन, वचन व काया से न झूठ बोलना, न बुलवाना, न बोलने वाले का समर्थन करना।
3. **अचौर्य-** मन, वचन एवं शरीर से न चोरी करना, न करवाना न करने वालों का समर्थन करना।
4. **ब्रह्मचर्य-** मन, वचन एवं शरीर से मैथुन = व्यभिचार न स्वयं सेवन करना, न करवाना तथा न करने वालों का समर्थन करना।
5. **अपरिग्रह-** मन, वचन व काया से परिग्रह = धनादि न स्वयं रखना, न दूसरों से रखवाना तथा न रखने वालों का समर्थन करना।

इस प्रकार जैन साधु की साधना बड़ी कठोर है। इतने कठोर नियमों का पालन हर किसी के लिए पालन करना संभव नहीं है। अतः तलवार की धार पर चलने के समान इन अत्यन्त कठिन महाव्रतों का पालन करने वाले साधु एवं साध्वी जी महाराज सच्चे गुरु हैं। चाहे वे किसी सम्प्रदाय, जाति आदि के क्यों न हों।

आजकल साधु नामधारी लाखों की संख्या में विचरण करते हैं, अतः हर किसी को गुरु नहीं मानना चाहिये। कहा है- गुरु कीजे जानकर, पानी पीजे छानकर।

इस प्रकार जैन धर्म में गुरुपद केवल साम्प्रदायिक वेशभूषा तथा बाह्य क्रियाकाण्ड में ही सीमित नहीं है। जैन धर्म आत्मिक धर्म है, अतः उसकी महानता भी आत्मलीनता में है। जो भी साधक अहिंसा और सत्य की साधना में सच्चे मन से संलग्न हैं, अन्तर में वीतराग भाव की ज्योति जला रहे हैं, वे जैन धर्म में गुरु हैं।

प्रश्नोत्तर : गुरु सम्बन्धी

प्र.1 गुरु किसे कहते हैं?

उत्तर- मानव-मन में रहे हुए अज्ञान अंधकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाले महापुरुष को गुरु कहते हैं।

प्र.2 गुरु हमें क्या देते हैं?

उत्तर- गुरु हमें ज्ञान रूपी चक्षु प्रदान करते हैं, जिससे हम अपने हित-अहित को समझ सकते हैं।

प्र.3 हमारे गुरु कौन हैं?

उत्तर- आचार्य, उपाध्याय एवं साधु-साध्वीजी महाराज हमारे गुरु हैं।

प्र.4 हम इनको गुरु क्यों मानते हैं?

उत्तर- क्योंकि ये स्वयं मोक्ष मार्ग में लगे हैं तथा हमें भी मोक्ष का मार्ग दिखाते हैं।

प्र.5 हमारे गुरु की क्या-क्या विशेषताएँ हैं?

उत्तर- हमारे गुरु में निम्न विशेषताएँ होती है :-

1. पंच महाव्रतों का निरतिचार पालन करते हैं।
2. 5 समिति 3 गुप्ति का आराधन करते हैं।
3. आत्मा से परमात्मा बनने के लक्ष्य को सामने रखकर विशुद्ध आचार एवं विचार से उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं।
4. रात्रि में अन्न एवं जल न तो ग्रहण करते हैं और न रखते हैं।
5. दूर-देश में पैदल विहार कर धर्मोपदेश देते हैं।
6. किसी भी प्रकार का नशा नहीं करते हैं।
7. रुपया-पैसा या मठ-मन्दिर आदि कोई सम्पत्ति नहीं रखते हैं।
8. आग, पानी (कच्चा) एवं हरी सब्जी आदि को स्पर्श नहीं करते हैं।
9. पंखा, कूलर, विद्युत् इत्यादि का प्रयोग नहीं करते हैं।

प्र.6 जैन साधु किस जाति के होते हैं?

उत्तर- किसी भी जाति का व्यक्ति जैन साधु हो सकता है।

धर्म

'धर्म' शब्द का सामान्य अर्थ कर्त्तव्य है। धर्म शब्द संस्कृत की 'धृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ है- कर्त्तव्य या जाति, सम्प्रदाय, आदि के प्रचलित आचार का पालन करना। इसकी व्युत्पत्ति करते हुए कहा गया है-

"दुर्गतौ प्रपतन्तं प्राणिनः धारयति इति धर्मः" अर्थात् दुर्गति में गिरते हुए प्राणियों को जो धारण करता है, वह धर्म है।

इससे स्पष्ट है- जो दुःख से, दुर्गति से, पापाचार से, पतन से, बचाकर आत्मा को ऊँचा उठाने वाला है, धारण करने वाला है, वह धर्म है। दुःखों का, पापों का मूल कारण मोह व अज्ञान है। मोह व अज्ञान का नाश - सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन व सम्यग्चारित्र से संभव है। अतः हम कह सकते हैं कि सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन व सम्यग्चारित्र ही सच्चा धर्म है। दार्शनिक जगत् में वस्तु के स्वभाव को धर्म कहा गया है और सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शन, सम्यग्चारित्र आत्मा के स्वभाव हैं।

रत्नत्रय की आराधना को सर्वाधिक महत्त्व देने वाला जैन धर्म सच्चा धर्म है। क्योंकि जिन भगवान् के द्वारा कहा गया धर्म जैन धर्म है और जिन भगवान् रत्नत्रय रूप आत्मिक स्वरूप को पूर्ण रूप से प्राप्त कर चुके हैं। अतः उनके द्वारा प्ररुपित जैन धर्म सभी जीवों के लिए कल्याणकारी है। जैन धर्म अनादि है, क्योंकि जिन कोई व्यक्ति विशेष नहीं है। पूर्व काल में राग-द्वेष के विजेता वीतराग जिन अनंत हुए हैं और भविष्य में भी अनंत होंगे। अतः जैन धर्म अनादि काल से चला आ रहा है, लेकिन समय-समय पर होने वाले जिन भगवान् इसे अधिकाधिक प्रचारित एवं प्रकाशित करते हैं।

भगवान् ने आचार धर्म के दो रूपों को हमारे सम्मुख रखा- एक सर्वविरति रूप अणगार धर्म, जिसमें पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति रूप 13 प्रकार के चारित्रधर्म-पालन का कथन किया गया है। जबकि दूसरा रूप जिसे हम अगारधर्म या श्रावकधर्म कहते हैं। इसमें 12 व्रतों के पालन के साथ छोटे-छोटे अन्य नियमों के पालन द्वारा आत्मा को निर्मल बनाने की बात कही गई है। प्रथम प्रकार के धर्म का पालन दृढ़ मनोबल वाली भव्य आत्मा ही कर सकती है। जबकि दूसरे प्रकार का धर्म अगार धर्म है, जिसमें छूट होती हैं अतः इसका कोई भी व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार पालन कर सकता है।

जैन धर्म एक वैज्ञानिक एवं आत्मिक धर्म है, अतः जो भव्य आत्मा, आत्मा के स्वरूप को समझ ले तथा चेतन व जड़ का भेद कर सकने में समर्थ हो, वही व्यक्ति जैन-धर्म का पालन कर सकता है। जैन धर्म के पालन हेतु जाति, सम्प्रदाय, देश आदि का प्रतिबन्ध नहीं है। जिसके हृदय में दया का झरना निरन्तर बहता हो, जो 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' के उत्कृष्ट भावों से भावित हो। वही आत्मा जैन धर्म का पालन कर सकता है। भोगों में लिप्त व्यक्तियों को इस धर्म का पालन अत्यन्त कठिन लगता है। जो व्यक्ति भोग से विरत है उसके लिये इस धर्म का पालन सरल है, लेकिन भोगों से विरति भी स्व-पर के ज्ञान के बिना संभव नहीं है। ज्ञान प्राप्त भव्य आत्माओं के सान्निध्य एवं उनके सत्संग से भोगों से विरति संभव है। अतः प्रारम्भिक अवस्था में धर्म के सम्मुख आने का सबसे सरलतम उपाय सच्चे एवं अच्छे त्यागी तपस्वियों का अधिक से अधिक सान्निध्य प्राप्त होना है।

जैन धर्म के सिद्धान्त बहुत गंभीर हैं। लेकिन मोटे रूप में हम निम्न सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर जैन धर्म का सम्यग् पालन कर सकते हैं-

1. आत्मा ज्ञान-दर्शन गुण से सम्पन्न शाश्वत तत्त्व है।
2. आत्मा ही सुख-दुःख का कर्त्ता और विकर्त्ता है।

3. आत्मा का अन्तिम लक्ष्य मोक्ष्य प्राप्त करना है न कि स्वर्ग या भौतिक सुख।
4. आत्मा व शरीर अलग-अलग हैं। आत्मा चेतना गुण वाली है, जबकि शरीर क्षण-क्षण बदलने वाला है।
5. आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है।
6. आत्मा की अशुद्ध स्थिति संसार है।
7. आत्मा की पूर्ण शुद्ध अवस्था मोक्ष है।
8. आत्मा की अशुभ प्रवृत्ति पाप व शुभ प्रवृत्ति पुण्य है।
9. अहिंसा, संयम और तप का समुचित समन्वित आचरण श्रेष्ठ धर्म है।
10. धर्म साधना में जाति-पाँति का कोई भेद नहीं है।
11. जगत् अनादि और अनन्त है।

प्रश्नोत्तर : धर्म व जैन धर्म सम्बन्धी

प्र.1 धर्म किसे कहते हैं?

उत्तर- 1. वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते हैं।
2. अहिंसा संयम एवं तप ही श्रेष्ठ धर्म है।
3. सम्यग् ज्ञान, सम्यग् दर्शन एवं सम्यग् चारित्र रूप रत्नत्रय धर्म है।
4. जो दुर्गति में गिरते हुए प्राणियों को धारण करता है, वह धर्म है।
5. दान, शील, तप व भावना धर्म है।

प्र.2 धर्म की एक उपयुक्त परिभाषा क्या है?

उत्तर- सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप रत्नत्रय की आराधना को धर्म कहते हैं।

प्र.3 भगवान् महावीर ने कौनसे धर्म की प्ररूपणा की?

उत्तर- जिन धर्म की, श्रुत एवं चारित्र धर्म की (अगार एवं अणगार धर्म की)।

प्र.4 अगार धर्म क्या है?

उत्तर- घर में रहकर आंशिक रूप से जिन छोटे-छोटे नियमों एवं 12 व्रतों का पालन किया जाता है, उसे अगार धर्म कहते हैं। इसका दूसरा नाम श्रावकधर्म भी है।

प्र.5 अणगार धर्म क्या है?

उत्तर- पाँच महाव्रत के पालन रूप सर्वविरति चारित्र को अणगार धर्म कहते हैं। इसका दूसरा नाम साधुधर्म भी है।

प्र.6 जैन किसे कहते हैं।

उत्तर- जो जिन भगवान् का उपासक हो, उसे जैन कहते हैं।

प्र.7 जैन धर्म का प्राण किसे कहा गया है?

उत्तर- अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह, समता एवं वीतरागता को।

प्र.8 अहिंसा, अनेकान्त, अपरिग्रह, समता एवं वीतरागता के पालन के लिये क्या आवश्यक है?

उत्तर- संयम व तप आवश्यक है।

प्र.9 ज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर- जो भोगों से विरत करके त्याग की ओर अग्रसर करने में सहायक हो, उसे ज्ञान कहते हैं।

प्र.10 दर्शन किसे कहते हैं?

उत्तर- जिन प्ररूपित तत्त्वों पर सही श्रद्धा करना दर्शन है।

प्र.11 चारित्र किसे कहते हैं?

उत्तर- महाव्रत या अणुव्रत का पालन करना चारित्र है।

प्र.12 तप किसे कहते है?

उत्तर- उपवास आदि द्वारा काया को तपाना तथा प्रायश्चित्त आदि द्वारा मन एवं आत्मा को ज्ञान पूर्वक तपाने को तप कहते हैं।

प्र.13 श्रद्धा एवं पालन करने की अपेक्षा से जैन कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर- जैन तीन प्रकार के होते हैं- 1. जिन वचनों पर श्रद्धा रखने वाले; 2. श्रद्धा के साथ आंशिक नियमों का पालन करने वाले; एवं 3. श्रद्धा के साथ पूर्ण चारित्र का पालन करने वाले।

प्र.14 तीर्थंकर किसे कहते हैं?

उत्तर- चतुर्विध संघ रूप धर्म तीर्थ की स्थापना करने वाले केवलज्ञानी भगवन्तों को तीर्थंकर कहते हैं।

प्र.15 तीर्थ किसे कहते हैं?

उत्तर- संसार सागर से तिरने के साधन को तीर्थ कहते हैं। यह साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका के भेद से अथवा सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र व तप के भेद से चार प्रकार का होता है।

प्र.16 विहरमान किसे कहते हैं, ये वर्तमान में कितने हैं?

उत्तर- जो अरिहन्त भगवान तीर्थंकर के रूप में महाविदेह क्षेत्र में विचरण करते हैं वे विहरमान कहलाते हैं ये वर्तमान में 20 हैं जो श्री सीमन्धरस्वामीजी, युगमन्धरस्वामीजी आदि के नाम से जाने जाते हैं। ये सभी अपने-अपने क्षेत्र में तीर्थ की स्थापना करते हैं। केवल ज्ञानी होते हैं और आयु पूर्ण होने पर मोक्ष में जाते हैं।

उच्चारण शुद्धि के नियम

अक्षर, शब्द एवं वाक्यों का उच्चारण शुद्ध होना आवश्यक है। अशुद्ध उच्चारण करने से शब्द का अर्थ ही बदल जाता है, कभी-कभी विपरीत अर्थ भी हो जाता है। अशुद्ध उच्चारण करने से हीनाक्षर-अधिकाक्षर अर्थात् शब्द, अक्षर, मात्रा, अनुस्वार आदि कम अधिक बोलने से ज्ञान का अतिचार (दोष) लगता है। अतः शुद्ध उच्चारण करना आवश्यक है।

शुद्ध उच्चारण के नियमों की जानकारी न होने एवं उनका सही उपयोग नहीं करने से सामायिक, प्रतिक्रमण आदि के पाठों में बहुत अधिक अशुद्धियाँ देखने-सुनने में आती हैं। अतः यहाँ पर उच्चारण शुद्धि के प्रमुख नियम दिये जा रहे हैं। आशा है पाठकगण इनकी सहायता से शुद्ध उच्चारण करना सीख सकेंगे।

ह्रस्व स्वर- अ इ उ - अ + इ- ए

दीर्घ स्वर- आ ई ऊ - अ या आ + उ = ओ

1. प्राकृत भाषा में ये अक्षर नहीं होते- ऐ, औ, ऋ, लृ, श, ष, क्ष, त्र, ज्ञ।
2. दीर्घ स्वर व दीर्घ स्वर की मात्रा वाले अक्षरों के उच्चारण में जोर देकर बोला जावे व ह्रस्व स्वर व ह्रस्व मात्रा वाले अक्षरों को बिना जोर दिये बोला जावे। इक्षु- ईख। उष्ट्र- ऊँट। पिटना- पीटना। कुल- कूल। किला- कीला। किट-कीट।

शब्द के प्रारम्भ में आधा अक्षर आवे तो उसके बाद वाले अक्षर पर जोर दिया जावे। जैसे स्तवन में 'त' पर।

शब्द के बीच में आधा अक्षर आवे तो उसके पहले वाले अक्षर पर जोर देकर बोला जावे। जैसे- कल्प में 'क' पर जोर देकर बोलें। उज्जोयगरे में उज् जोयगरे 'उ' पर जोर देना चाहिये।

शब्द के बीच में दो आधे अक्षर होवें तो- पहले व पीछे के अक्षर पर जोर दिया जावे। जैसे- मत्स्य में 'म' और 'य' पर।

शब्द के अन्त में अनुस्वार (.) आवे तो 'म्' बोला जावे और मध्य में आवे तो उसका अगला अक्षर जिस वर्ग का हो, उस वर्ग के पंचम अक्षर रूप बोला जावे। जैसे- पढमं- पढमम्। कंघा- कङ्घा। कंचन- कञ्चन। कंठ- कण्ठ। कंथा- कन्था। कंप- कम्प।

शब्द के अन्तिम अक्षर को छोड़कर अन्य किसी भी अक्षर पर यदि अनुस्वार (.) हो तथा अनुस्वार (.) के तुरन्त बाद वाला अक्षर-

		उदाहरण
'य' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ञ्' करेंगे	संयम - सञ्यम।
'र' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ण् (न)' करेंगे	संरक्षण - सन्रक्षण।
'ल' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'न्' करेंगे	संलेखना - सन्लेखना।
'व' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'म्' करेंगे	संवर - सम्वर।
'श' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ञ्' करेंगे	संशय - सञ्शय।
'ष' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ण् (न)' करेंगे	अनुशंषा - अनुशण्षा
'स' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'न्' करेंगे	नमंसामि - नमन्सामि।
'ह' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ङ्.' करेंगे	संहार - सङ्हार।
'क्ष' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ङ्.' करेंगे	संक्षेप - सङ्क्षेप।
'त्र' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'न्' करेंगे	मंत्र - मन्त्र।
'ज्ञ' होने पर अनुस्वार (.) का उच्चारण	'ञ्' करेंगे	संज्ञा - सञ्ज्ञा।

शब्द के ऊपर का तुर्राकार 'र' आधा 'र' व नीचे का पूरा 'र' होता है। जैसे- कर्म- कर् म। दीर्घ- दीर् घ। क्रम- क्रम। निद्रा- निद् रा।

सामायिक : एक सामान्य परिचय

समभाव की साधना को सामायिक कहते हैं। अनुकूल वस्तु पर राग न करना व प्रतिकूल वस्तु पर द्वेष न करना अथवा राग-द्वेष में सम रहने की साधना ही सामायिक है।

व्यावहारिक अर्थ में सावद्य योगों (पापकारी कार्य) का त्याग कर कम से कम एक मुहूर्त (48 मिनिट) तक राग-द्वेष को जीतने की क्षमता का विकास करने की क्रिया सामायिक है।

सामायिक का प्रमुख उद्देश्य प्रिय-अप्रिय, निंदा-विकथा, सत्कार-तिरस्कार, हानि-लाभ, जीवन-मरण, शत्रु-मित्र इत्यादि विविध अवस्थाओं में शान्त चित्त रहने की क्षमता का विकास करना है।

सामायिक में गृहस्थ का वेश उतारकर बिना सिले शुद्ध श्वेत वस्त्र धारण करने चाहिएँ तथा सामायिक काल में चिन्तन-ध्यान के साथ-साथ जीवनोपयोगी पुस्तकों का स्वाध्याय करना चाहिए।

सामायिक सूत्र (मूल पाठ)

1. नवकार मंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं।
एसो पंच णमुक्कारो, सव्व-पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं।।

2. गुरु-वन्दन-सूत्र

(तिक्खुत्तो का पाठ)

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं, करेमि, वंदामि, नमंसामि,
सक्कारेमि, सम्माणेमि। कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं,
पज्जुवासामि, मत्थएण वंदामि।

3. आलोचना-सूत्र

(इरियावहियं सुत्तं)
(इच्छाकारेणं का पाठ)

इच्छाकारेणं संदिसह भगवं !
इरियावहियं पडिक्कमामि, इच्छं इच्छामि
पडिक्कमिउं इरियावहियाए विराहणाए, गमणागमणे,
पाणक्कमणे, बीयक्कमणे, हरियक्कमणे,
ओसा उत्तिंग पणग दग मट्टी मक्कडा संताणा संकमणे,
जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया,
तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया,
लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया,
उद्दविया, ठाणाओ ठाणं संकामिया, जीवियाओ
ववरोविया, तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

4. उत्तरीकरण सूत्र

(तस्स उत्तरी सुत्तं)

(कायोत्सर्ग-प्रतिज्ञा का पाठ)

तस्स उत्तरीकरणेणं, पायच्छित्तकरणेणं,
विसोहिकरणेणं, विसल्लीकरणेणं,
पावाणं कम्माणं निग्घायणट्ठाए, ठामि
काउस्सग्गं। अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं,
खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं,
वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए
सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेल-
संचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं।
एवमाइएहिं, आगारेहिं, अभग्गो, अविराहिओ
हुज्ज मे काउस्सग्गो। जाव अरिहंताणं
भगवंताणं णमुक्कारेणं ण पारेमि। ताव कायं
ठाणेणं मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि।

5. कायोत्सर्ग शुद्धि-सूत्र

(काउसग्ग का पाठ)

कायोत्सर्ग में आर्त्तध्यान, रौद्र ध्यान ध्याया हो,
धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान न ध्याया हो।
कायोत्सर्ग में मन, वचन, काया चलायमान हुए हों,
तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं।

6. चतुर्विंशतिस्तव

(उक्कित्तणं सुत्तं)

(लोगस्स का पाठ)

लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतित्थयरे जिणे ।
अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली ।।1।।

उसभमजिअं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ।।2।।

सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल सिज्जंस वासुपुज्जं च ।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि ।।3।।

कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठणेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ।।4।।

एवं मए अभिथुआ, विहूयरयमला पहीणजरमरणा।
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ।।5।।

कित्तिय वंदिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ।
आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवरमुत्तमं दिंतु ।।6।।

चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा ।
सागरवर गंभीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।7।।

7. सामायिक-प्रतिज्ञा सूत्र

(करेमि भंते का पाठ)

(सामायिक लेने का पाठ)

करेमि भंते !
सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्चक्खामि।
जावनियमं★ पज्जुवासामि दुविहं तिविहेणं
ण करेमि, ण कारवेमि, मणसा, वयसा, कायसा,
तस्स भंते ! पडिक्कमामि, निंदामि,
गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि।

8. शक्रस्तव (प्रणिपात) सूत्र

(णमोत्थु णं का पाठ)

णमोत्थु णं, अरिहंताणं, भगवंताणं आइगराणं तित्थयराणं, सयंसंबुद्धाणं पुरिसुत्तमाणं, पुरिससीहाणं, पुरिसवरपुंडरीयाणं, पुरिसवरगंधहत्थीणं। लोगुत्तमाणं, लोगनाहाणं, लोगहिआणं, लोगपईवाणं लोगपज्जोअगराणं, अभयदयाणं, चक्खुदयाणं, मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं धम्मवर चाउरंत, चक्कवट्टीणं। दीवोत्ताणं सरणगई पइट्ठाणं। अप्पडिहय-वरनाण-दंसणधराणं विअट्टछउमाणं, जिणाणं, जावयाणं, तिण्णाणं, तारयाणं, बुद्धाणं, बोहयाणं, मुत्ताणं, मोयगाणं, सव्वण्णूणं सव्वदरिसीणं, सिव-मयल-मरुअ-मणंत-मक्खय-मव्वाबाह-मपुणरावित्ति सिद्धिगइनामधेयं ठाणं संपत्ताणं★★ णमो जिणाणं जिअभयाणं।

9. समाप्ति सूत्र

(एयस्स नवमस्स)

(सामायिक पारने का पाठ)

एयस्स नवमस्स सामाइय वयस्स पंच अइयारा जाणियव्वा ण समायरियव्वा तं जहा-मणदुप्पणिहाणे, वयदुप्पणिहाणे, कायदुप्पणिहाणे, सामाइयस्स सइअकरणया, सामाइयस्स अणवट्ठियस्स करणया तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।1।।

सामाइयं सम्मं काएणं, ण फासियं, ण पालियं, ण तीरियं, ण किट्टियं, ण सोहियं,
ण आराहियं, आणाए अणुपालियं ण भवइ, तस्स मिच्छा मि दुक्कड़ं ।।2।।

सामायिक में दस मन के, दस वचन के, बारह काया के इन बत्तीस
दोषों में से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।3।।

सामायिक में स्त्री-कथा✦, भत्त-कथा, देश-कथा, राज-कथा इन चार
विकथाओं में से कोई विकथा की हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।4।।

सामायिक में आहार संज्ञा, भय संज्ञा, परिग्रह संज्ञा, मैथुन संज्ञा, इन चार
संज्ञाओं में से किसी का सेवन किया हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।5।।

★ जितनी सामायिक लेनी हो 'उतने मुहूर्त' बोलें।

★★ दूसरी बार नमोत्थु णं का पाठ बोलने पर 'ठाणं संपत्ताणं' के स्थान पर 'ठाणं संपाविउकामाणं' बोलें।

✦ स्त्रियाँ 'पुरुष-कथा' शब्द बोलें।

सामायिक में अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार हुआ हो, जाने, अनजाने, मन, वचन, काया
से कोई दोष लगा हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।6।।

सामायिक व्रत विधि से लिया हो, विधि से पाला हो, फिर भी विधि में कोई अविधि
हुई हो तो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।7।।

सामायिक में पाठ आदि उच्चारण करते समय काना, मात्रा, अनुस्वार,पद, अक्षर, ह्रस्व, दीर्घ, कम ज्यादा पढ़ा हो तो
अनन्त सिद्ध केवली भगवान् की साक्षी से तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।।8।।

सामायिक के बत्तीस दोष

मन के दस दोष

1. अविवेक दोष, 2. यशोवांछा दोष, 3. लाभ वांछा दोष, 4. गर्व दोष, 5. भय दोष, 6. निदान दोष, 7. संशय दोष, 8. रोष दोष, 9. अविनय दोष, 10. अबहुमान दोष।

वचन के दस दोष

1. कुवचन दोष, 2. सहसाकार दोष, 3. स्वच्छन्द दोष, 4. संक्षेप दोष, 5. कलह दोष, 6. विकथा दोष, 7. हास्य दोष, 8. अशुद्ध दोष, 9. निरपेक्ष दोष, 10. मुम्मण दोष।

काया के बारह दोष

1. कुआसन दोष, 2. चलासन दोष, 3. चलदृष्टि दोष, 4. सावद्य-क्रिया दोष, 5. आलम्बन दोष, 6. आकुंचन प्रसारण दोष, 7. आलस्य दोष, 8. मोटन दोष, 9. मल दोष, 10. विमासन दोष, 11. निद्रा दोष, 12. वैयावृत्त्य दोष

सामायिक व्रत ग्रहण करने की विधि

सर्वप्रथम पूँजनी से स्थान को पूँजकर आसन बिछावें। बिना सिला हुआ सफेद चोलपट्टा-दुपट्टा पहनकर, मुख पर मुखवस्त्रिका बाँधकर गुरुदेव को (1) **तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार वन्दन** करके चउवीसत्थव की आज्ञा लें। (2) **नवकार मंत्र,** (3) **इच्छाकारेणं** और (4) **तस्स उत्तरी** का पाठ बोलें फिर (5) **इच्छाकारेणं के पाठ का काउस्सग्ग** करें। (6) **'नमो अरिहंताणं'** कहकर (7) **'काउस्सग्ग शुद्धि' का पाठ** बोले। फिर (8) **लोगस्स का पाठ** बोल कर गुरु महाराज विराजमान हो तो उनसे अन्यथा उत्तर-पूर्व दिशा (ईशान कोण) की ओर मुँह करके शासनपति की आज्ञा लेकर स्वयं (9) **'करेमि-भंते'** के पाठ से सामायिक लेवें। तत्पश्चात् बायाँ घुटना खड़ा करके (10) **दो बार नमोत्थु णं का पाठ** बोलें। सामायिक के काल में प्रार्थना, स्तवन एवं सत्साहित्य का स्वाध्याय आदि करें।

सामायिक पारने की विधि

जितनी सामायिक का व्रत ग्रहण किया, उतना मुहूर्त (समय) पूर्ण होने पर निम्नानुसार पाठों का क्रमशः उच्चारण करें- (1) **नवकार मंत्र-** एक बार (2) **आलोचना सूत्र (इच्छाकारेणं का पाठ)**- एक बार (3) **उत्तरीकरण सूत्र (तस्सउत्तरी का पाठ)**- एक बार (4) मन में एक **उत्कीर्त्तन सूत्र (लोगस्स का पाठ)** का काउस्सग्ग करें। (5) **'णमो अरिहंताणं'** प्रकट में बोलें। (6) **कायोत्सर्ग-शुद्धि का पाठ-** एक बार (7) **उत्कीर्त्तन सूत्र (लोगस्स का पाठ)**- एक बार (8) **शक्रस्तव-प्रणिपात सूत्र (णमोत्थु णं का पाठ)**- दो बार (9) **समाप्ति सूत्र (एयस्स नवमस्स)**- एक बार (10) **नवकार मंत्र-** तीन बार

तत्त्व विभाग-

पच्चीस बोल (1 से 13 बोल तक)

(1) **पहले बोले गति चार-** 1. नरकगति, 2. तिर्यंचगति, 3. मनुष्यगति, 4. देवगति।

(2) **दूसरे बोले जाति पाँच-** 1. एकेन्द्रिय, 2. बेइन्द्रिय, 3. तेइन्द्रिय, 4. चउरिन्द्रिय, 5. पंचेन्द्रिय।

(3) **तीसरे बोले काय छह-** 1. पृथ्वीकाय, 2. अप्काय, 3. तैजसकाय (तेऊकाय), 4. वायुकाय, 5. वनस्पतिकाय, 6. त्रसकाय।

(4) **चौथे बोल इन्द्रिय पाँच-** 1. श्रोत्रेन्द्रिय, 2. चक्षुरिन्द्रिय, 3. घ्राणेन्द्रिय, 4. रसनेन्द्रिय, 5. स्पर्शनेन्द्रिय।

(5) **पाँचवें बोले पर्याप्ति छह-** 1. आहार पर्याप्ति, 2. शरीर पर्याप्ति, 3. इन्द्रिय पर्याप्ति, 4. श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति, 5. भाषा पर्याप्ति, 6. मन पर्याप्ति।

(6) **छठे बोले प्राण दस-** 1. श्रोत्रेन्द्रिय-बलप्राण, 2. चक्षुरिन्द्रिय-बलप्राण, 3. घ्राणेन्द्रिय-बलप्राण, 4. रसनेन्द्रिय-बलप्राण, 5. स्पर्शनेन्द्रिय-बलप्राण, 6. मनोबलप्राण, 7. वचन- बलप्राण, 8. काय-बलप्राण, 9. श्वासोच्छ्वास-बलप्राण, 10. आयुष्य- बलप्राण।

(7) **सातवें बोले शरीर पाँच-** 1. औदारिक, 2. वैक्रिय, 3. आहारक, 4. तैजस, 5. कार्मण शरीर।

(8) **आठवें बोले योग पन्द्रह-** (चार मन के) 1. सत्य मनोयोग, 2. असत्य मनोयोग, 3. मिश्र मनोयोग, 4. व्यवहार मनोयोग।
(चार वचन के) 5. सत्य भाषा, 6. असत्य भाषा, 7. मिश्र भाषा, 8. व्यवहार भाषा। (सात काया के), 9. औदारिक, 10. औदारिक मिश्र, 11. वैक्रिय, 12. वैक्रिय मिश्र, 13. आहारक, 14. आहारक मिश्र, और 15. कार्मण काय योग।

(9) **नौवें बोले उपयोग बारह-** (पाँच ज्ञान, तीन अज्ञान और चार दर्शन) 5 ज्ञान- मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यायज्ञान और केवलज्ञान। 3 अज्ञान- मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान और विभंगज्ञान। 4 दर्शन- चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवल दर्शन।

(10) **दसवें बोले कर्म आठ-** 1. ज्ञानावरणीय, 2. दर्शनावरणीय, 3. वेदनीय, 4. मोहनीय, 5. आयु, 6. नाम, 7. गोत्र, और 8. अन्तराय कर्म।

(11) **ग्यारहवें बोले गुणस्थान चौदह-** 1. मिथ्यात्व गुणस्थान, 2. सास्वादन गुणस्थान, 3. मिश्र गुणस्थान, 4. अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थान, 5. देशविरति श्रावक गुणस्थान, 6. प्रमादी साधु गुणस्थान, 7. अप्रमादी साधु गुणस्थान, 8. निवृत्ति बादर गुणस्थान, 9. अनिवृत्ति बादर गुणस्थान, 10. सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान, 11. उपशान्त मोहनीय गुणस्थान, 12. क्षीण मोहनीय गुणस्थान, 13. सयोगी केवली गुणस्थान और 14. अयोगी केवली गुणस्थान।

(12) **बारहवें बोले पाँच इन्द्रियों के 23 विषय और 240 विकार।**

1. **श्रोत्रेन्द्रिय के तीन विषयों के 12 विकार-** जीव शब्द, अजीव शब्द और मिश्र शब्द। ये 3 शुभ, 3 अशुभ, इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष, इस प्रकार 12 विकार।
2. **चक्षुरिन्द्रिय के पाँच विषयों के 60 विकार-** काला, नीला, लाल, पीला, और सफेद। ये 5 सचित्त, 5 अचित्त और 5 मिश्र। ये 15 शुभ और 15 अशुभ, इन 30 पर राग और 30 पर द्वेष। इस प्रकार 60 विकार।

3. **घ्राणेन्द्रिय के दो विषयों के 12 विकार-** सुरभिगन्ध और दुरभिगन्ध। ये 2 सचित्त, 2 अचित्त और 2 मिश्र। इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष। इस प्रकार 12 विकार।

4. **रसनेन्द्रिय के पाँच विषयों के 60 विकार-** तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा और मीठा। ये 5 सचित्त, 5 अचित्त, 5 मिश्र - ये 15 शुभ और 15 अशुभ, इन 30 पर राग और 30 पर द्वेष। इस प्रकार 60 विकार।

5. **स्पर्शनेन्द्रिय के आठ विषयों के 96 विकार-** खुरदरा, कोमल, हल्का, भारी, ठण्डा, गर्म, लुखा और चिकना। ये 8 सचित्त, 8 अचित्त, 8 मिश्र, ये 24 शुभ और अशुभ, इन 48 पर राग और 48 पर द्वेष। इस प्रकार 96 विकार। इस प्रकार (12+60+12+60+96) 240 विकार हुए।

(13) **तेरहवें बोले मिथ्यात्व के दस भेद-** 1. जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 2. अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 3. धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 4. अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 5. साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 6. असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 7. संसार के मार्ग को मोक्ष का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 8. मोक्ष के मार्ग को संसार का मार्ग श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 9. आठ कर्मों से मुक्त को अमुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 10. आठ कर्मों से अमुक्त को मुक्त श्रद्धे तो मिथ्यात्व।

कथा/जीवनी-

भगवान महावीर

इस अवसर्पिणी काल में भरतक्षेत्र के चौबीसवें एवं अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर हुए। घोर परीषहों को भी धैर्य, साहस एवं समभाव के साथ सहन कर प्रभु महावीर ने अभूतपूर्व सहनशीलता, क्षमा एवं घोर तपश्चर्या का संसार के समक्ष एक नया कीर्तिमान स्थापित किया।

जन्म-

इस अवसर्पिणी काल के चौथे आरक के 75 वर्ष और कुछ अधिक आठ मास ही शेष बचे तब (ईस्वी सन् से लगभग 600 वर्ष पूर्व) आषाढ़ शुक्ला छठ की रात्रि में ब्राह्मणकुण्ड के ऋषभदत्त ब्राह्मण की पत्नी देवानन्दा की कुक्षि में गर्भ रूप में उत्पन्न हुए।

जब इन्द्र ने अवधिज्ञान से देखा कि महावीर का जीव ब्राह्मण कुल में गर्भ रूप में है, जबकि तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव सदा उग्रकुल आदि विशुद्ध एवं प्रभावशाली कुलों में ही जन्म लेते हैं। अतः यह मेरा कर्त्तव्य है कि उनका उग्र आदि विशुद्ध कुल-वंश में साहरण करवाऊँ। ऐसा सोचकर 83वीं रात्रि में हरिणैगमेषी देव द्वारा महावीर के जीव का महाराजा सिद्धार्थ की महारानी त्रिशला देवी की कुक्षि में साहरण करवाया।

साहरण की रात्रि में ही महारानी त्रिशला ने 14 मंगलकारी शुभस्वप्न देखे। निमित्तज्ञों ने शास्त्र प्रमाणों से बताया कि इस प्रकार के मांगलिक शुभ स्वप्नों को देखने वाली माता त्रिशला को तीर्थंकर अथवा चक्रवर्ती जैसे किसी महान् भाग्यशाली पुत्ररत्न का लाभ होगा।

प्रशस्त दोहद (आन्तरिक इच्छा) और मंगलमय वातावरण में गर्भकाल पूर्ण कर नौ मास और साढे सात रात्रि बीतने पर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को मध्यरात्रि के समय त्रिशला महारानी ने सुखपूर्वक पुत्र रत्न को जन्म दिया। प्रभु के जन्म लेते ही समस्त लोक में अलौकिक उद्योत और शान्ति का वातावरण व्याप्त हो गया। 56 दिशाकुमारियों व 64 देवेन्द्रों ने अपनी सम्पूर्ण दिव्य ऋद्धि के साथ जन्म महोत्सव मनाया।

नामकरण-

क्षत्रियकुण्ड ग्राम में राजा सिद्धार्थ द्वारा दस दिन तक जन्म महोत्सव मनाये जाने के बाद राजा ने मित्रों और बन्धुजनों को आमंत्रित किया तथा स्वादिष्ट भोज्य पदार्थों से उनका सत्कार करते हुए कहा- 'जब से यह शिशु हमारे कुल में आया तब से धन, धान्य, कोष, भण्डार, बल, वाहन आदि समस्त राजकीय साधनों में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। अतः मेरी सम्मति में इसका नाम 'वर्द्धमान' रखना उपयुक्त जँचता है। उपस्थित लोगों का समर्थन मिलने पर त्रिशलानन्दन का नाम 'वर्द्धमान' रखा गया।

विवाह-

प्रभु महावीर प्रारम्भ से ही अन्तर्मुखी वृत्ति वाले थे। संसार के भोगों से विरक्त थे। माता-पिता के प्रबल आग्रह से महावीर का विवाह वसन्तपुर के महासामन्त समरवीर की सर्वगुण सम्पन्न पुत्री यशोदा के साथ शुभ-मुहूर्त में सम्पन्न हुआ। यथा समय एक पुत्री हुई जिसका नाम प्रियदर्शना रखा गया।

वैराग्य-

जब महावीर के माता-पिता का स्वर्गवास हुआ तब महावीर की आयु 28 वर्ष की थी। माता-पिता की मृत्यु से महावीर की वैराग्य भावना अत्यधिक बलवती हो गयी। उन्होंने ज्येष्ठ (बड़े) भ्राता नन्दीवर्धन आदि स्वजनों के सम्मुख प्रव्रज्या (दीक्षा) ग्रहण करने की भावना व्यक्त की।

किन्तु नन्दीवर्धन इस बात को सुनकर बहुत दुःखी हुए और बोले- भाई! कुछ काल के लिये ठहरो, फिर दीक्षा लेना।

महावीर ने अवधि ज्ञान से देखा कि इन सब स्वजनों का इतना प्रबल स्नेह है कि इस समय दीक्षा लेने पर वे सब भ्रान्तचित्त हो जायेंगे और कई तो प्राण भी छोड़ देंगे। ऐसा सोचकर उन्होंने कहा- "अच्छा, तो मुझे कब तक ठहरना होगा?" इस पर स्वजनों ने कहा- कम से कम अभी दो वर्ष तक तो ठहरना ही चाहिये। महावीर ने उन सबकी बात मान ली और बोले- "इस अवधि में मैं आहारादि अपनी इच्छानुसार करूँगा।"

इस प्रकार एक वर्ष तक वैराग्य की साधना कर प्रभु ने वर्षीदान प्रारम्भ किया। प्रतिदिन एक करोड़ आठ लाख स्वर्णमुद्राओं का दान करते हुए उन्होंने वर्ष भर में तीन अरब अठ्यासी करोड़ एवं अस्सी लाख स्वर्णमुद्राओं का दान किया।

उपसर्ग-

तीस वर्ष की यौवनावस्था में महावीर पूर्ण संयमी बनकर श्रमण बन गये। दीक्षित होते ही उन्हें मनःपर्याय ज्ञान हो गया। दीक्षा के बाद महावीर प्रभु ने घोर तपस्या एवं साधना की। अनेक महान उपसर्गों को अपूर्व समता भाव से सहन किया। ग्वाले का उपसर्ग, संगम देव के कष्ट, शूलपाणि यक्ष का परीषह, चण्डकौशिक का डंक, व्यन्तरी के उपसर्ग, गौशालक तथा लाटदेशीय यातनाएँ भगवान महावीर की समता एवं सहनशीलता के असाधारण उदाहरण हैं।

अभिग्रह-

साधना के बारहवें वर्ष में जब प्रभु महावीर मेढ़िया ग्राम से कोशाम्बी पधारे तब उन्होंने पौष कृष्णा प्रतिपदा के दिन एक विकट अभिग्रह (प्रतिज्ञा विशेष) धारण किया, जो इस प्रकार था-

द्रव्य से- 1. उड़द के बाकुले हो, 2. सूप के कोने में हो, **क्षेत्र से-** 3. दान देने वाली देहली से एक पैर बाहर तथा दूसरा पैर भीतर करके द्वारशाखा के सहारे खड़ी हो, **काल से-** 4. तीसरे प्रहर में जब भिक्षा का समय समाप्त हो चुका हो, **भाव से-** 5. बाकुले देने वाली अविवाहिता हो, 6. राजकन्या हो, 7. फिर भी बाजार में बिकी हो, 8. सदाचारिणी और निरपराध होते हुए भी उसके हाथों में हथकड़ी हो, 9. पैरों में बेड़ी हो, 10. मुँडा हुआ सिर हो, 11. शरीर पर मात्र काछ पहने हो, 12. तीन दिन की भूखी हो और 13. आँखों में आँसू हो तो उसके हाथ से मैं भिक्षा लूँगा, अन्यथा छह महीने तक निराहार रहूँगा।

उपर्युक्त कठोरतम प्रतिज्ञा को ग्रहण कर महावीर प्रतिदिन भिक्षार्थ कोशाम्बी में विचरण करते। इस प्रकार पाँच माह पच्चीस दिन बीत गये।

संयोगवश एक दिन भिक्षा के लिए प्रभु 'धन्ना' (धनवाह) श्रेष्ठी के घर गये, जहाँ राजकुमारी चन्दना द्वारा अपना अभिग्रह पूरा हुआ जानकर चन्दना के हाथ से प्रभु ने भिक्षा ग्रहण कर ली। तत्क्षण चन्दना की हथकड़ियाँ और बेड़ियाँ टूट कर बहुमूल्य आभूषणों में बदल गई। आकाश में देव-दुन्दुभि बजी, पंच दिव्य (महान् आश्चर्य- 1. स्वर्ण मुद्राओं की वर्षा, 2. पाँच रंग के अचित्त पुष्प, 3. दिव्य वस्त्र, 4. देवदुन्दुभियों का बजना और 5. आकाश में 'अहो दान' की घोषणा) प्रकट हुए। भगवान को केवलज्ञान उत्पन्न होने पर यही चन्दना भगवान की प्रथम शिष्या, साध्वी संघ की प्रथम सदस्या और छत्तीस हजार साध्वियों की प्रमुखा बनी।

केवलज्ञान-

साढ़े बारह वर्ष की अपूर्व साधना के पश्चात् प्रभु महावीर को जृंभिकाग्राम नगर के बाहर, ऋजुबालुका नदी के किनारे, श्यामाक गाथापति के खेत में, शाल वृक्ष के नीचे गोदोहिका आसन में छट्ठ भक्त (बेले) की निर्जल तपस्या में वैशाख शुक्ला दसमी के दिन, पिछले प्रहर में केवल ज्ञान-केवल दर्शन की उपलब्धि हुई।

भगवान महावीर को केवलज्ञान उत्पन्न होते ही देवगणों ने पंचदिव्यों की वृष्टि की, सुन्दर समवशरण की रचना की। यह जानते हुए भी कि यहाँ सर्वविरति व्रत ग्रहण करने योग्य कोई नहीं है, कल्प समझ कर कुछ काल उपदेश दिया। वहाँ मनुष्यों की उपस्थिति नहीं होने से किसी ने विरति रूप चारित्र धर्म स्वीकार नहीं किया।

भगवान की दूसरी देशना मध्यम पावानगरी के महासेन उद्यान में हुई। उन दिनों इसी नगरी में सोमिल नामक प्रसिद्ध ब्राह्मण के यहाँ बड़ा भारी यज्ञ हो रहा था। इन्द्रभूति आदि उस समय के उच्च कोटि के ग्यारह पण्डित भी अपने 4400 शिष्यों के साथ यज्ञ में सम्मिलित थे।

भगवान के समवशरण में आकाश मार्ग से देव-देवियों के समुदाय देव-विमानों से आने लगे। यज्ञ स्थल के पण्डितों ने देवगण को बिना रूके सीधे ही आगे निकलते देखा तो उन्हें आश्चर्य हुआ। प्रमुख पण्डित इन्द्रभूति को जब मालूम हुआ कि नगर के बाहर सर्वज्ञ महावीर आये हैं और उन्हीं के समवशरण में ये देवगण जा रहे हैं तो उनके मन में अपने पाण्डित्त्य का अहंकार जागृत हो उठा। वे भगवान के अलौकिक ज्ञान की परख करने और उन्हें शास्त्रार्थ में पराजित करने की भावना से समवशरण में आये। उनके साथ पाँच सौ छात्र और अन्य विद्वान् भी थे।

भगवान की शान्तमुद्रा एवं तेजस्वी मुख-मण्डल को देखकर तथा उनकी अमृतवाणी का पान करने से इन्द्रभूति के सब अन्तरंग संशयों का छेदन (समापन) हो गया और वे उसी समय अपने शिष्यों सहित भगवान के चरणों में दीक्षित हो गये। इसी प्रकार अन्य दस विद्वान भी अपनी शिष्य मण्डली के साथ उसी दिन दीक्षित हुए। ये ग्यारह प्रमुख शिष्य ही गणधर कहलाये।

उपदेश-

भगवान महावीर ने अहिंसा, संयम, तप का, पाँच महाव्रत, पाँच समिति, तीन गुप्ति का, अनेकान्त, अपरिग्रह एवं आत्मवाद का उपदेश दिया। अवतारवाद की मान्यता का खण्डन करते हुए उत्तारवाद प्रस्तुत किया। यज्ञ के नाम पर होने वाली पशु एवं नर बलि का घोर विरोध किया तथा सभी वर्ग के, सभी जाति के लोगों को धर्मपालन का अधिकार बतलाया। जाति-पाँति व लिंग के भेदभाव को मिटाने हेतु उपदेश दिये।

इस प्रकार 30 वर्ष तक तीर्थंकर के रूप में विचरण कर जिन धर्म का सदुपदेश दिया। आपका अन्तिम चातुर्मास पावापुरी में हस्तीपाल राजा की पौषधशाला में हुआ।

निर्वाण-

जब वर्षाकाल का चौथा मास और सातवाँ पक्ष चल रहा था, तब बेले की तपस्या से सोलह प्रहर तक देशना देते हुए अन्त में कार्तिक कृष्णा अमावस्या को रात्रि में चार अघाती कर्मों का क्षय किया और सिद्ध-बुद्ध मुक्त और परिनिर्वाण को प्राप्त हुए। निर्वाण के समय भगवान की आयु 72 वर्ष थीं।

भगवान महावीर के इन्द्रभूति प्रमुख 14,000 साधु, चन्दनबाला प्रमुख 36,000 साध्वियाँ, आनन्द प्रमुख 1,59,000 श्रावक तथा सुलसा, रेवती प्रमुख 3,18,000 श्राविकाएँ थीं। भगवान महावीर के शासन में सात सौ साधुओं और चौदह सौ साध्वियों ने मोक्ष प्राप्त किया।

शिक्षाएँ-

1. कर्म किसी को भी नहीं छोड़ते, ऐसा समझकर कर्म बांधने से भय रखो।
2. तीर्थंकर स्वयं गृह त्याग कर साधु धर्म स्वीकारते हैं तो फिर बिना धर्म करणी किये हमारा कल्याण कैसे होगा।
3. भगवान ने जब इतनी उग्र तपस्या की तो हमें भी शक्ति अनुसार तपस्या करनी चाहिये।
4. भगवान ने सामने जाकर उपसर्ग सहे तो कम से कम हमें अपने सामने आये हुए उपसर्गों को समता से सहन करने चाहियें।

प्रार्थना विभाग -

1. नवकार मंत्र है महामंत्र

नवकार मंत्र है महामंत्र, इस मंत्र की महिमा भारी है ।
आगम में कथी गुरुवर से सुनी, अनुभव में जिसे उतारी है ।।टेर।।

'अरिहंताणं' पद पहला है, अरि आरति दूर भगाता है ।
सिद्धाणं सुमिरण करने से, मनवांछित सिद्धि पाता है ।।
आयरियाणं तो अष्टसिद्धि और नवनिधि के भंडारी हैं ।।1।।

उवज्झायाणं अज्ञान तिमिर, हर ज्ञान प्रकाश फैलाता है।
सव्वसाहूणं सब सुख दाता, तन मन को स्वस्थ बनाता है ।।
पद पाँच के सुमिरण करने से, मिट जाती सकल बीमारी है ।।2।।

श्रीपाल सुदर्शन मयणरेहा, जिसने भी जपा आनन्द पाया ।
जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिले सौरभ छाया ।।
मन नन्दन वन में रमण करें, यह ऐसा मंगलकारी है ।।3।।

नित नई बधाई सुने कान, लक्ष्मी वरमाला पहनाती ।
'अशोक मुनि' जय विजय मिले, शान्ति प्रसन्नता बढ़ जाती ।।
सम्मान मिले सत्कार मिले, भव जल से नैया तारी है ।।4।।

रचयिता- श्री अशोकमुनिजी म.सा.

2. महावीर-स्तुति

जय बोलो महावीर स्वामी की, घट-घट के अन्तर्यामी की ।
जय बोलो महावीर स्वामी की ।।टेर।।

जिस जगती का उद्धार किया, जो आया शरण उसे पार किया ।
जिस पीड़ सुनी हर प्राणी की- जय....।।1।।

जो पाप मिटाने आया था, जिस भारत आन जगाया था ।
उस त्रिशला नन्दन ज्ञानी की- जय....।।2।।

हो लाख बार प्रणाम तुम्हें, हे वीर प्रभु ! भगवान् तुम्हें ।
'मुनि दर्शन' मुक्ति-गामी की- जय....।।3।।

रचयिता- श्री दर्शनमुनिजी म.सा.

सामान्य विभाग -

चौबीस तीर्थंकरों के नाम

1. श्री ऋषभदेवजी
2. श्री अजितनाथजी
3. श्री सम्भवनाथजी
4. श्री अभिनन्दनजी
5. श्री सुमतिनाथजी
6. श्री पद्मप्रभजी
7. श्री सुपार्श्वनाथजी
8. श्री चन्द्रप्रभजी
9. श्री सुविधिनाथजी
10. श्री शीतलनाथजी
11. श्री श्रेयांसनाथजी
12. श्री वासुपूज्यजी
13. श्री विमलनाथजी
14. श्री अनन्तनाथजी
15. श्री धर्मनाथजी
16. श्री शान्तिनाथजी
17. श्री कुन्थुनाथजी
18. श्री अरनाथजी
19. श्री मल्लिनाथजी
20. श्री मुनिसुव्रतजी
21. श्री नमिनाथजी
22. श्री अरिष्टनेमिजी
23. श्री पार्श्वनाथजी
24. श्री महावीरस्वामीजी

पाँच अभिगम

अभिगम अर्थात् भगवान् के समवसरण में या साधु-साध्वी के उपाश्रय (स्थानक) में जाते समय पालने योग्य नियम। ये अभिगम पाँच हैं :-

सचित्त त्याग अचित्त रख, उत्तरासंग कर जोड़ ।
कर एकाग्र चित्त को, सब झंझटों को छोड़ ।।

1. **सचित्त का त्याग-** देव, गुरु के समीप जाते समय इलायची, बीज सहित मुनक्का (बड़ी दाख), छिलके सहित बादाम, पान, फल, फूल, बीज, अनाज, हरी दातौन, सब्जी आदि सचित्त वनस्पति, कच्चा पानी, नमक, लालटेन, चालू टार्च, सेल की घड़ी, मोबाईल फोन आदि साथ नहीं ले जाना।
2. **अचित्त का विवेक-** अभिमान सूचक वस्तुएँ जैसे छत्र, चामर, जूते, लाठी, वाहन, शस्त्र आदि एक तरफ रखकर एवं वस्त्र व्यवस्थित कर देव-गुरु को वंदना करना। भाइयों को सामायिक के लिए महासतीजी व बहिनों के सामने वस्त्र नहीं बदलना चाहिए, किन्तु एक तरफ जाकर वस्त्र बदलना चाहिए।
3. **उत्तरासंग-धारण-** मुँहपत्ति या रूमाल मुँह के ऊपर रखना। देव, गुरु के समक्ष खुले मुँह से नहीं बोलना।
4. **अंजलीकरण-** जोड़े हुए दोनों हाथ ललाट से लगाकर विनय पूर्वक वन्दना करना।
5. **मन की एकाग्रता-** गृहकार्य के प्रपंच या पापकार्यों से मन हटाकर देव-गुरु जो फरमाते हैं, उसे एकाग्रता पूर्वक सुनना।

सप्त कुव्यसन

अर्थ-

जिन कुटेवों, बुरी आदतों के कारण मनुष्य का पतन होता है, सदाचार एवं धर्म से विमुख बनता है, जिनके कारण मनुष्य का विश्वास नष्ट होता है, जो सज्जनों के लिए त्याज्य है, और जिन दुराचारों से मनुष्य जन्म बिगड़ कर नरकादि दुर्गति का पात्र बनता है, उन कुटेवों को "व्यसन" कहते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति को निम्न सात कुव्यसनों का त्याग अवश्य करना चाहिये, इससे जीवन निर्मल और पवित्र बनता है, जीवन में सर्वांगीण विकास की संभावना बनती है तथा व्यक्ति अनेक खतरों से बच जाता है।

दोहा- **मद्यमांस वेश्यागमन, परनारी अरु शिकार ।**
जुआ चोरी जो सुख चहे, सातों व्यसन निवार ।।

1. जुआ- शर्त लगाकर जो खेल खेला जाता है उसे 'जुआ' कहते हैं। जुआ खेलना महापाप है। जुए में आसक्त बना व्यक्ति धन का नाश करता है। वर्तमान युग में शेयरों के सट्टे ने व्यक्ति का कितना नुकसान किया है, कई व्यक्तियों को करोड़पति से रोड़पति बना दिया। घर बिक गये, जेवर बिक गये, इज्जत धूल में मिल गई। ताश-पत्ती, चौपड़, शतरंज आदि के माध्यम से पैसे लगाकर खेलना, सट्टा करना भी जुआ है। लॉटरी भी एक प्रकार का जुआ है। जिसे एक बार इसकी लत लग जाती है उसका सर्वनाश हुए बिना नहीं रहता।

2. चोरी- किसी भी वस्तु को चाहे वह सजीव हो या निर्जीव, छोटी हो या बड़ी, कम हो या ज्यादा उसके स्वामी की अनुमति के बिना लेना 'चोरी' है। स्वार्थ के वशीभूत बनकर जाने अनजाने में हम अनेक छोटी-बड़ी चोरियाँ कर लेते हैं और अपने लिए कर्मबंध का कारण पैदा कर लेते हैं। चोरी करना महापाप है। चोरी करने वाले को लोग घृणा व शंका की दृष्टि से देखते हैं उनका कोई विश्वास नहीं करते, पकड़े जाने पर जेल की हवा खानी पड़ती है। सेंध आदि लगाकर, जेब काटकर, रास्ते में चलते हुए को लूटना, स्मगलिंग का धंधा करना चोरी के रूप हैं।

3. मांस भक्षण- यह निर्दयता व पशुता की सबसे बड़ी निशानी है। मांस, मछली, अण्डे आदि मांसाहारी पदार्थों का सेवन करना 'मांस भक्षण' है। मनुष्य जीभ के स्वाद के लिए बेचारे मूक व निरीह प्राणियों की हत्या करके मांस का सेवन करता है। सभी को अपने प्राण प्यारे होते हैं। प्राणियों की हत्या करना महापाप है।

शरीर व मकान को सजाने के लिए भी आज निर्दोष प्राणियों को मौत के घाट उतारा जा रहा है। हमारी इस विलासिता, फैशन व प्रदर्शन ने करोड़ों-अरबों जीवों के प्राण लिए हैं। फैशन ने आज जीव हिंसा को प्रोत्साहन दिया है। दवाओं के निर्माण में भी खूब हिंसा हो रही है। हमारे भोग, श्रृंगार के साधन कितने निरीह व बेजुबान प्राणियों पर अत्याचार कर, पीड़ा व यातनाएँ देकर निर्मित होते हैं। इन्हें हम जैनी कहलाने वाले कैसे काम में ले सकते हैं।

4. मदिरापान- शराब मानव को मदहोश कर देती है। इसके पीने से बुद्धि नष्ट हो जाती है। अपने पराये का भान नहीं रहता। वाणी पर संयम नहीं रहता, धन नष्ट हो जाता है। शराब मानव को पशु जैसा बना देती है। जिसे इसकी एक बार आदत पड़ जाती है वह आसानी से छूटती नहीं है। इसको पीने से घर के घर बरबाद हो जाते हैं। घर स्वर्ग की जगह श्मशान बन जाते हैं, एक-एक दाने के लिए बच्चे तरस जाते हैं। शराब पीने से व्यक्ति को कई बीमारियाँ लग जाती है। गुर्दे खराब हो जाते हैं, पेट में फोड़े व जख्म बन जाते हैं। कभी-कभी तो हार्ट फेल भी हो जाता है।

6. **परस्त्रीगमन-** अपनी स्त्री को छोड़कर दूसरी स्त्रियों के पास जाना, विषयों का सेवन करना 'परस्त्रीगमन' है। मानव सोचता है कि परस्त्रीगमन करने से अधिक आनन्द की अनुभूति होगी, पर ये उसकी मूर्खता है। परस्त्री पुरुष से प्यार तभी तक करेगी जब तक वह उसको पैसा देता रहेगा। पैसा देना ज्योंहि बन्द हुआ वह धक्का देकर उसको निकाल देगी। परस्त्रीगमन से चिकने व अशुभ कर्मों का बन्धन होने के साथ ही एड्स जैसी अनेक जानलेवा बीमारी भी लग जाती है। अतः इससे बचना चाहिये।

6. वेश्यागमन- वेश्यागमन मानव-जीवन का भयंकर कोढ़ है। जो इसके चंगुल में एक बार फंस जाता है फिर उससे बाहर निकलना कठिन हो जाता है। वेश्यासेवी मानव घोर पाप करता है वह अपना सब कुछ लुटा देता है। वेश्यासेवी व्यक्ति की वीर्य शक्ति विनष्ट हो जाती है। उसका पैसा घर बार सब कुछ नष्ट हो जाता है, पैसा समाप्त हो जाने के बाद वेश्या उसको बाहर निकाल देती है, उसको दर-दर का भिखारी बना देती है। वेश्यागमन पहले सुखद, आकर्षक व लुभावना लगता है पर अंत उसका अति दुःखदायी होता है। वेश्या कपटी, छली व मायावी होती है और बड़े-बड़े श्रीमंतों को फंसाती है।

आज के युग में उन्हें वेश्या न कहकर 'कॉलगर्ल' कहा जाता है। अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनकर आलीशान बंगलों में रहकर ये धंधा करती हैं। अतः उनसे बचना चाहिये, वरना हम दुर्गति के भव भ्रमण को बढ़ाने के साथ ही अनेक घातक बीमारियों के शिकार बन सकते हैं। एड्स के खतरे की तलवार हरदम सिर पर लटकी रहती है।

7. शिकार- व्यक्ति अपने थोड़े से मौज-शौक के लिए या मनोरंजन के लिये मूक और निर्दोष प्राणियों के प्राणों का हरण करता है। उनके प्राणों के साथ खिलवाड़ करता है, उन्हें दुःखी करता है। शिकार करने वाला व्यक्ति क्रूर व निर्दयी बन जाता है। घट में दया रखने वाला व्यक्ति कभी भी शिकार नहीं कर सकता। यदि हमारे पर कोई प्रहार करता है अथवा हमारे प्राणों को हरता हैं तो हमें कितनी अधिक पीड़ा होती है तो दूसरों पर प्रहार करने से उन्हें पीड़ा नहीं होगी? इन मूक बेसहारा प्राणियों को तीर, तलवार, भाले व बन्दूक से उड़ा देने पर उन्हें कितनी तकलीफ होती होगी? फिर क्यों हम उन प्राणियों के प्राणों का हरण करते हैं। व्यक्ति अनेक कारणों से शिकार करता है, जैसे- 1. मनोविनोद के

लिये, 2. साहस प्रदर्शन के लिये, 3. कुसंग के कारण, 4. धन प्राप्ति के लिए, 5. फैशन परस्ती के लिये, 6. घर को सजाने के लिए, आदि। शिकार के कई रूप हैं, जैसे- मनोरंजन के लिये कभी-कभी सांडों, मुर्गों, भैंसों, बिल्लियों, कुत्तों, बंदरों, सांप-नेवला आदि जानवरों को परस्पर लड़ाना।

अतः व्यसन जीवन के सर्वनाशक हैं। ये जीवन को नरक में ढकेलने का कार्य करते हैं। हमें इनसे बचने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये। जुआँ खेलने से धन का नाश, मांस भक्षण से दयाधर्म का नाश, शराब से परिवार एवं समाज के हितों का नाश, शिकार से धर्म का नाश, चोरी से प्रतिष्ठा का नाश, परस्त्रीगमन-वेश्यागमन से तन, धन और मन का सर्वनाश करता हुआ मानव अधोगति का मेहमान बनता है। अतः साधकों को सदैव इन दुर्व्यसनों से दूर रहना चाहिये। जीवन को उन्नत बनाने के लिये व चरित्र निर्माण के लिये इन कुव्यसनों को छोड़ना नितान्त जरूरी है।

विनय- आवश्यकता, स्वरूप, महत्त्व एवं लाभ

सरलता, सोमता, सादगी, सदाचार, संतोष, विनय आदि मानव जीवन रूपी वाटिका के सुरभित सुमन हैं। इनमें विनय गुण सबसे महत्त्वपूर्ण है। यह धर्म का मूल है, मोक्ष का सोपान है, आत्मा का निज स्वभाव है, जो अहंकार के गलने पर प्रकट होता है। विनय एक आभ्यन्तर तप है।

विनय की आवश्यकता-

आज हमारे चारों ओर अशान्ति एवं तनाव का वातावरण है। भ्रष्टाचार, स्वछन्दता एवं उद्दण्डता बढ़ रही है। ऐसे विषम समय में सुख-शान्ति पूर्वक जीने के लिये तथा अपने जीवन को सद्गुणों की सौरभ से सुरभित करने के लिये, विनय की महत्ती आवश्यकता है। विनय ही वह सद्गुण है जो हमें योग्य नागरिक, सुयोग्य पुत्र, प्रियशिष्य तथा सबका प्रीतिपात्र बनाता है। विनय हमारे जीवन को संस्कारित करता है तथा हमें तनाव मुक्त जीवन देता है। क्योंकि मनुष्य का अहंकार ही उसे दुःखी करता है और विनय के आने पर अहंकार रहता नहीं, अतः हम सुख एवं शांति को प्राप्त करते हैं।

विनय क्या है?-

विनय शब्द 'वि' और 'नय' इन दोनों से मिलकर बना है। जिसका अर्थ है विशेष रूप से ले जाने वाला अर्थात् "विनय वह साधन है जो विशेष रूप से गुणों की ओर ले जाता है, धर्म की ओर ले जाता है, न्याय एवं नीति की ओर ले जाता है तथा मोक्ष की ओर ले जाता है।"

"व्यवहार में बड़ों का सम्मान करना", उनकी आज्ञा का पालन करना, सामाजिक मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं करना 'विनय' है।

जैन सिद्धान्त दीपिका के अनुसार- आशातना नहीं करना और योग्य व्यक्तियों का सम्मान करना 'विनय' है।

नीति वाक्यामृत के अनुसार- "व्रत, विद्या एवं उम्र में बड़ों के सामने नम्र आचरण करना 'विनय' है।"

निश्चय में- "आत्म स्वरूप को समझकर आत्मगुणों का सम्मान करना 'विनय' है। विनय आत्मा की अहंकार रहित अवस्था है।"

विनय का अर्थ मात्र शरीर को झुकाना ही नहीं है। अपितु अपने अहंकार को छोड़कर विनम्र बनना है। शरीर तो मलमूत्र का भण्डार है, माँस का पुतला है, हड्डियों का ढेर है। ऐसे शरीर को माता-पिता या गुरु चरणों में झुका देने का अर्थ है अपना सारा जीवन अर्पण कर देना, समर्पित कर देना। अर्थात् मैं अपने विचार, अपनी भावनाएँ, अपना जीवन सब आपको समर्पित कर रहा हूँ। यदि मात्र हाथ जुड़े और मन न जुड़े तो हाथ जुड़ने का क्या मूल्य? एक कैदी भी हाथ जोड़ता है, गुलाम भी हाथ जोड़ता है पर वहाँ दीनता, गुलामी व चापलूसी होती है उसमें नम्रता नहीं टपकती। अन्तर हृदय की श्रद्धा नहीं बोलती। वन्दन भावनाओं से होता है। गुणों को होता है। किसी को तुम अपना बनाना चाहते हो तो अपने आपको उनके चरणों में समर्पित कर दो। उनकी आज्ञाओं का पालन करो, उनके इशारों का ध्यान रखो, फिर तुम जो चाहोगे वही पाओगे।

बाल गंगाधर तिलक ने कहा- नम्रता, प्रेमपूर्ण व्यवहार और सहनशीलता से मनुष्य तो क्या पशुपक्षी भी आपके वश में हो जाते हैं। सचमुच विनय एक वशीकरण मंत्र है, जिससे शत्रु भी मित्र बन जाते हैं।

नम्र व्यवहार व नम्र वचन सबको प्रिय लगते हैं। नम्र स्त्री का घर भर में शासन चलता है वह सबको प्रसन्न रखती है। अतः नम्रता जादू का डंडा है, जादुई असर करता है। जिस घर में विनय नहीं, उस घर में शांति, आनन्द व

सम्प नहीं रह सकता। वहाँ अशान्ति, क्लेश, ईर्ष्या, द्वेष आदि दुर्गुण ही रहेंगे। जहाँ समर्पण है, अपनत्व है, आत्मीय भाव है वहाँ कभी कोई कमी रह ही नहीं सकती। वहाँ दुःख, अशांति, कलह पास नहीं फटकता।

विनय के भेद-

भगवती सूत्र में विनय के सात भेद कहे गये हैं :-

1. **ज्ञान विनय-** श्रद्धापूर्वक जैनागमों का स्वाध्याय एवं चिंतन-मनन करना 'ज्ञान विनय' है।
2. **दर्शन विनय-** सम्यक्त्व के प्रति दृढ़ता रखना 'दर्शन विनय' है।
3. **चारित्र विनय-** सामायिक आदि पाँच चारित्र का पालन करना अथवा उनके पालक महापुरुषों का विनय करना 'चारित्र विनय' है।
4. **मन विनय-** मन से गुणिजनों के गुणों का चिन्तन करना, 'मन विनय' है।
5. **वचन विनय-** वचन से गुणिजनों के गुण-गान करना 'वचन विनय' है।
6. **काया विनय-** काया से अहंकार रहित शिष्ट प्रवृत्ति करना 'काया विनय' है।
7. **लोकोपचार विनय-** गुरुजन, माता, पिता एवं गुणवानों के आने पर खड़ा होना, अभिवादन करना, उनकी आज्ञा का पालन करना तथा उनके सामने शिष्ट आचरण करना 'लोकोपचार विनय' है।

विनयशीलता के लक्षण-

1. इंगित व हाव-भाव से बड़ों के भावों को समझता है।
2. सदैव गुरुजनों के समीप रहता है।
3. माता-पिता व गुरु का विरोध नहीं करने वाला तथा सदा उनकी आज्ञा मानने वाला होता है।
4. किसी का अपमान व तिरस्कार नहीं करता है।
5. अपने द्वारा किये गये अपराध को स्वीकार करता है।
6. विशेषज्ञ होते हुए भी अभिमान नहीं करता है।
7. मृदुभाषी, सरल तथा आडम्बर रहित होता है।

विनय का महत्त्व-

विनय गुण ही हमें सबका प्रीतिपात्र बनाता है। विनीत शिष्य से गुरु तथा विनीत पुत्र से माता-पिता सदैव प्रसन्न रहते हैं। विनीत व्यक्ति समाज, धर्मस्थान एवं अन्य सभी स्थानों पर सम्मान का अधिकारी होता है। विनीत व्यक्ति ही संयमी हो सकता है। विनय ही जिनशासन का मूल है। जिस प्रकार समस्त रसों का मूल पानी है, उसी प्रकार विनय समस्त सद्‌गुणों का मूल है। विनय मोक्ष मार्ग का प्रथम सोपान है। यह सद्‌गुणों को सुरक्षित रखने का साधन है।

विनय से लाभ-

1. विनय एक प्रकार का आभ्यन्तरतप है, जिससे कर्म क्षय होते हैं।
2. विनय आधि, व्याधि एवं उपाधि के लिये रामबाण औषधि है।
3. विनय हृदय को निर्मल एवं शान्त बनाता है।
4. विनय से उच्च गोत्र का बंध होता है।
5. विनय से विपुल अर्थ वाले श्रुत ज्ञान की प्राप्ति होती है।

6. विनय से लोक में यश व कीर्ति प्राप्त होती है।
7. विनय से ऋद्धि सम्पन्न देवभव अथवा शाश्वत सुख रूप मोक्ष की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार नम्र आचरण, मृदु व्यवहार, विद्या, उम्र एवं गुण में बड़ों का सम्मान करना 'विनय' है। यह अहंकार गलने से प्रकट होता है। विनय धर्म का मूल है। यह एक अन्तरंगतप है। मोक्ष का सोपान है। कहा भी है-

विनय धर्म का मूल है, विनय ज्ञान का मूल।
सम्पत् सुख अरु गुरु-कृपा, विनय बिना निर्मूल ॥

प्रश्न-पत्र

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

कक्षा : प्रथम – जैन धर्म परिचय (परीक्षा 12 जुलाई, 2015)

समय : 3 घण्टे **अंक : 100**

प्र.1 निम्नलिखित प्रश्नों में से सही उत्तर का क्रमाक्षर कोष्ठक में लिखिए : 10x1=(10)

(a) संसार से तिरने के साधन को कहते हैं –
(क) तीर्थ (ख) धन
(ग) नाव (घ) मोक्ष (क)

(b) किसी शब्द में जिस अक्षर पर अनुस्वार (.) है, उसके बाद वाला अक्षर स' होने पर अनुस्वार (-) का उच्चारण होगा –
(क) श् (ख) न्
(ग) म् (घ) ण् (ख)

(c) दीर्घ स्वर की मात्रा का शब्द है –
(क) ऊँट (ख) इक्षु
(ग) कल्प (घ) किला (क)

(d) सामायिक लेने का पाठ है –
(क) एयस्स नवमस्स (ख) लोगस्स
(ग) इच्छाकारेणं (घ) करेमि भंते (घ)

(e) जैन धर्म है –
(क) आर्थिक (ख) आत्मिक
(ग) भौतिक (घ) सांसारिक (ख)

(f) आठवाँ बोल है –
(क) कर्म-8 (ख) प्राण-10
(ग) योग-15 (घ) उपयोग-12 (ग)

(g) स्पर्शनेन्द्रिय के विषय हैं –
(क) 8 (ख) 60
(ग) 12 (घ) 96 (क)

(h) भगवान महावीर का दूसरा नाम है –
(क) गौतम (ख) श्रीधर
(ग) सिद्धार्थ (घ) वर्द्धमान (घ)

(i) 'नवकार मंत्र है ...... '' प्रार्थना के रचयिता हैं-
(क) श्री अशोक मुनिजी (ख) श्री गौतम मुनिजी
(ग) श्री दर्शन मुनिजी (घ) श्री ज्ञान मुनिजी (क)

(j) पाठ्यपुस्तक में विनय के भेद किस सूत्र के आधार से बतलाये हैं –
(क) दशवैकालिक सूत्र (ख) उत्तराध्ययन सूत्र
(ग) भगवती सूत्र (घ) नन्दी सूत्र (ग)

प्र.2 निम्न प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' अथवा 'नहीं' में दीजिए :- 10x1=(10)

(a) 'जिन भगवान' स्तुति करने से प्रसन्न होते हैं। (नहीं)
(b) महाव्रत का पालन करना ही 'चारित्र' है। (हाँ)
(c) प्राकृत भाषा में 'त्र ' अक्षर होता है। (नहीं)
(d) दीर्घ मात्रा वाले अक्षरों का उच्चारण जोर देकर किया जाता है। (हाँ)
(e) 'ईशान कोण' पूर्व-पश्चिम दिशा के बीच में होता है। (नहीं)
(f) असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व। (हाँ)
(g) भाषा पर्याप्ति छठी पर्याप्ति है। (नहीं)
(h) भगवान महावीर ने 28 वर्ष की उम्र में दीक्षा ली। (नहीं)
(i) विनय एक आभ्यन्तर तप है। (हाँ)
(j) मांस-भक्षण से दयाधर्म का नाश होता है। (हाँ)

प्र.3 मुझे पहचानो :- 10x1=(10)

(a) मैं राग-द्वेष को जीतने की क्षमता का विकास करने की क्रिया हूँ। सामायिक
(b) मैं सामायिक का समापन सूत्र हूँ। एयस्स नवमस्स
(c) मेरा दूसरा नाम साधु धर्म है। अनगार धर्म
(d) मुझमें परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है। आत्मा

(e)	मैं वचन का दूसरा दोष हूँ।	सहसाकार
(f)	मैं पच्चीस बोल का छठा बोल हूँ।	प्राण दस
(g)	मैं पाँचवा गुणस्थान हूँ।	देशविरति श्रावक गुणस्थान
(h)	मैंने हर प्राणी की पीड़ सुनी।	महावीर स्वामी
(i)	मैं मानव को मदहोश कर देती हूँ।	शराब/मदिरा
(j)	मैं पन्द्रहवाँ तीर्थकर हूँ	धर्मनाथजी

प्र.4 जोड़ी मिलानः - 10x1=(10)

(a)	धर्म ध्यान	-	सावद्य योग	शुक्लध्यान
(b)	जंभाइएणं	-	पर्याप्ति	उत्तरीकरण सूत्र
(c)	श्रतु ज्ञान	-	कर्म	उपयोग
(d)	पापकारी कार्य	-	वद्धमाणं	सावद्य योग
(e)	10 भेद	-	योग	मिथ्यात्व
(f)	लोगुत्तमाणं	-	शुक्ल ध्यान	बोहयाणं
(g)	शरीर	-	उत्तरीकरण सूत्र	पर्याप्ति
(h)	सुपासं	-	बोहयाणं	वद्धमाणं
(i)	वैक्रिय मिश्र	-	मिथ्यात्व	योग
(j)	मोहनीय	-	उपयोग	कर्म

प्र.5 निम्न प्रश्नों के उत्तर एक-दो पंक्तियों में लिखिए 12x2=(24)

(a) गुरु किसे कहते हैं ?
उ. मानव-मन में रहे हुए अज्ञान अंधकार को दूर कर ज्ञान का प्रकाश फैलाने वाले महापुरूष को गुरु कहते हैं।

(b) आन्तरिक शत्रु किसे कहा गया है ?
उ. काम, क्रोध, मद, लोभ, राग-द्वेष आदि आन्तरिक शत्रु कहे गये हैं।

(c) मन के प्रथम चार दोषों के नाम लिखिए।
उ. 1. अविवेक दोष, 2. यशोवांछा दोष, 3. लाभ वांछा दोष, 4. गर्व दोष।

(d) ज्ञान किसे कहते हैं ?
उ. जो भोगों से विरत करके त्याग की ओर अग्रसर करने में सहायक हो, उसे ज्ञान कहते हैं।

(e) एयस्स नवमस्स के पाठ में बोले जाने वाली चार संज्ञाओं के नाम लिखिए।
उ. 1. आहार संज्ञा, 2. भय संज्ञा, 3. परिग्रह संज्ञा, 4. मैथुन संज्ञा।

(f) दर्शन के चार उपयोग लिखिए।
उ. 1. चक्षुदर्शन, 2. अचक्षुदर्शन, 3. अवधिदर्शन, 4. केवलदर्शन।

(g) छह काय के नाम लिखिए।
उ. 1. पृथ्वीकाय, 2. अप्काय, 3. तेउ (तेजस) काय, 4. वायुकाय, 5. वनस्पतिकाय, 6. त्रसकाय।

(h) अंजलीकरण का क्या अर्थ है ?
उ. जोड़े हुए दोनों हाथ ललाट से लगाकर विनयपूर्वक वन्दना करना।

(i) 4, 9, 16, 21 वें तीर्थकर के नाम लिखिए।
उ. 4. अभिनन्दनजी, 9. सुविधिनाथजी, 16. शान्तिनाथजी, 21. नमिनाथजी।

(j) जुआ का अर्थ लिखिए।
उ. शर्त लगाकर जो खेल खेला जाता है, उसे जुआ कहते है।

(k) विनयशीलता के कोई दो लक्षण लिखिए।
उ. विनयशीलता के लक्षण- 1. इंगित व हाव-भाव से बड़ों के भावों को समझता है। 2. सदैव गुरूजनों के समीप रहता है। 3. माता-पिता व गुरु का विरोध नहीं करने वाला तथा सदा उनकी आज्ञा मानने वाला होता है। 4. किसी का अपमान व तिरस्कार नहीं करता है। 5. अपने द्वारा किये गये अपराध को स्वीकार करता है। 6. विशेषज्ञ होते हुए भी अभिमान नहीं करता है। 7. मृदुभाषी, सरल तथा आडम्बर रहित होता है। (इनमें से कोई दो)

(l) भगवान महावीर को केवल ज्ञान की प्राप्ति कब व किस आसन में हुई ?
उ. गोदोहिका आसन में वैशाख शुक्ला दसमी के दिन केवलज्ञान की प्राप्ति हुई।

प्र.6 निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-तीन वाक्यों में लिखिए : - 12x3=(36)

(a) विहरमान किसे कहते हैं तथा ये वर्तमान में कितने हैं ?

उ. जो अरिहन्त भगवान तीर्थंकर के रूप में महाविदेह क्षेत्र में विचरण करते हैं वे विहरमान कहलाते हैं। ये वर्तमान में 20 हैं, जो श्री सीमन्धरस्वामीजी, युगमन्धरस्वामीजी आदि के नाम से जाने जाते हैं। ये सभी अपने-अपने क्षेत्र में तीर्थ की स्थापना करते हैं। केवलज्ञानी होते हैं और आयु पूर्ण होने पर मोक्ष में जाते हैं।

(b) हमारे गुरु की प्रमुख विशेषताएँ पाठ्य पुस्तक के आधार पर लिखिए।

उ. 1. पंच महाव्रतों का निरत्तिचार पालन करते हैं। 2. 5 समिति 3 गुप्ति का आराधन करते हैं। 3. आत्मा से परमात्मा बनने के लक्ष्य को सामने रखकर विशुद्ध आचार एवं विचार से उस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। 4. रात्रि में अन्न एवं जल न तो ग्रहण करते हैं और न रखते हैं। 5. दूर-देश में पैदल विहार कर धर्मोपदेश देते हैं। 6. किसी भी प्रकार का नशा नहीं करते हैं। 7. रूपया-पैसा या मठ-मन्दिर आदि कोई सम्पत्ति नहीं रखते हैं। 8. आग, पानी (कच्चा) एवं हरी सब्जी आदि को स्पर्श नहीं करते हैं। 9. पंखा, कूलर, विद्युत् इत्यादि का प्रयोग नहीं करते हैं।

(c) अरिहंत व सिद्ध में क्या भेद हैं?

उ. 1. अरिहन्त भगवान सशरीरी होते हैं, जबकि सिद्ध अशरीरी होते हैं।
2. अरिहन्तों ने चार घाती कर्म क्षय किये हैं, जबकि सिद्धों ने आठों ही कर्म क्षय कर दिये हैं।
3. अरिहन्त भगवान धर्म का उपदेश देते हैं, मोक्ष का मार्ग बतलाते हैं तथा सिद्धों का स्वरूप बतलाते हैं, जबकि सिद्ध अशरीरी होने से ऐसी कोई प्रवृत्ति नहीं करते।

(d) सामायिक लेने की विधि के पाठों को क्रम से लिखिए।

उ. 1. तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार वन्दन करके चउवीसत्थव की आज्ञा लें। 2. नवकार मंत्र, 3. इच्छाकारेणं और 4. तस्स उत्तरी का पाठ बोलें फिर 5. इच्छाकारेणं के पाठ का काउस्सग्ग करें। 6. 'नमो अरिहंताणं' कहकर 7. काउस्सग्ग शुद्धि का पाठ बोलें। फिर 8. लोगस्स का पाठ बोलें। 9. करेमि-भंते के पाठ से सामायिक लेवें। तत्पश्चात् बायाँ घुटना खड़ा करके 10. दो बार नमोत्थुणं का पाठ बोलें।

(e) प्राण के दस भेदों के नाम क्रम से लिखिए।

उ. 1. श्रोत्रेन्द्रिय-बलप्राण, 2. चक्षुरिन्द्रिय-बलप्राण, 3. घ्राणेन्द्रिय-बलप्राण, 4. रसनेन्द्रिय-बलप्राण, 5. स्पर्शनेन्द्रिय-बलप्राण, 7. मनोबलप्राण, 7. वचन बलप्राण, 8. काय-बलप्राण, 9. श्वासोच्छ्वास-बलप्राण, 10. आयुष्य-बलप्राण।

(f) शरीर कितने होते हैं? नाम भी लिखिए।

उ. शरीर पाँच- 1. औदारिक, 2. वैक्रिय, 3. आहारक, 4. तैजस, 5. कार्मण शरीर।

(g) भगवान महावीर के कोई 12 अभिग्रह लिखिए।

उ. द्रव्य से- 1. उड़द के बाकुले हो, 2. सूप के कोने में हो, क्षेत्र से- 3. दान देने वाली देहली से एक पैर बाहर तथा दूसरा पैर भीतर करके द्वारशाखा के सहारे खड़ी हो, काल से- 4. तीसरे प्रहर में जब भिक्षा का समय समाप्त हो चुका हो, भाव से- 5. बाकुले देने वाली अविवाहिता हो, 6. राजकन्या हो, 7. फिर भी बाजार में बिकी हो, 8. सदाचारिणी और निरपराध होते हुए भी उसके हाथों में हथकड़ी हो, 9. पैरों में बेड़ी हो, 10. मुँडा हुआ सिर हो, 11. शरीर पर मात्र काछ पहने हो, 12. तीन दिन की भूखी हो और 13. आँखों में आँसू हो। (कोई 12 अभिग्रह)

(h) भगवान महावीर की जीवनी से मिलने वाली कोई 3 शिक्षाएँ लिखिए।

उ. 1. कर्म किसी को भी नहीं छोड़ते, ऐसा समझकर कर्म बांधने से भय रखो।
2. तीर्थंकर स्वयं गृह त्याग कर साधु धर्म स्वीकारते हैं तो फिर बिना धर्म करणी किये हमारा कल्याण कैसे होगा।
3. भगवान ने जब इतनी उग्र तपस्या की तो हमें भी शक्ति अनुसार तपस्या करनी चाहिये।
4.भगवान ने सामने जाकर उपसर्ग सहे तो कम से कम हमें अपने सामने आये हुए उपसर्गों को समता से सहन करने चाहिये।

(i) ''अन्नत्थ .... सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं।'' रिक्त स्थान को पूर्ण करके लिखिए।

उ. अन्नत्थ ऊससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंभाइएणं, उड्डुएणं, वायनिसग्गेणं, भमलीए, पित्तमुच्छाए, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिट्ठिसंचालेहिं।

(j) उवज्झायाणं .... बीमारी है। रिक्त स्थान को पूर्ण करके लिखिए।

उ. उवज्झायाणं अज्ञान तिमिर, हर ज्ञान प्रकाश फैलाता है।
सव्वसाहूणं सब सुख दाता, तन मन को स्वस्थ बनाता है।।
पद पाँच के सुमिरण करने से, मिट जाती सकल बीमारी है।।

(k) हो लाख ....स्वामी की। रिक्त स्थान को पूर्ण करके लिखिए।

उ. हो लाख बार प्रणाम तुम्हें, हे वीर प्रभु ! भगवान् तुम्हें।
मुनि-दर्शन मुक्ति-गामी की, जय बोलो महावीर स्वामी की।।

(l) शिकार खेलने के कोई तीन कारण लिखिए।

उ. 1. मनोविनोद के लिये, 2. साहस प्रदर्शन के लिये, 3. कुसंग के कारण, 4. धन प्राप्ति के लिए, 5. फैशन परस्ती के लिये, 6. घर को सजाने के लिए आदि। (इनमें से कोई तीन)

प्रश्न-पत्र

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर

कक्षा : प्रथम – जैन धर्म परिचय (परीक्षा ;24 जुलाई, 2016)

समय : 3 घण्टे **अंक : 100**

प्र.1 निम्नलिखित प्रश्नों में से सही उत्तर का क्रमाक्षर कोष्ठक में लिखिए : 10x1=(10)

(a) जैन धर्म में देव कहते हैं-
(क) आचार्य को (ख) अरिहंतों को
(ग) उपाध्याय को (घ) साधुओं को (ख)

(b) जिस अक्षर पर अनुस्वार (.) है, उसके आगे 'य' होने पर अनुस्वार का उच्चारण करेंगे-
(क) ञ् (ख) ण्
(ग) म् (घ) ङ् (क)

(c) एक सामायिक व्रत ग्रहण करने का समय है -
(क) 40 मिनट (ख) 60 मिनट
(ग) 48 मिनट (घ) 24 मिनट (ग)

(d) सामायिक के दोष है -
(क) 10 (ख) 12
(ग) 22 (घ) 32 (घ)

(e) दसवाँ बोल है -
(क) कर्म-8 (ख) गुणस्थान-14
(ग) प्राण-10 (घ) उपयोग-12 (क)

(f) घ्राणेन्द्रिय के विषय हैं -
(क) 5 (ख) 2
(ग) 3 (घ) 8 (ख)

(g) भगवान महावीर के माता-पिता का स्वर्गवास हुआ तब भगवान महावीर की आयु थी-
(क) 28 वर्ष (ख) 42 वर्ष
(ग) 12 वर्ष (घ) 30 वर्ष (क)

(h) 'नवकार मंत्र है महामंत्र' प्रार्थना के रचयिता हैं-
(क) आचार्य मानतुंग (ख) आचार्य हस्ती
(ग) अशोक मुनिजी (घ) गौतम मुनिजी (ग)

(i) 16 वें तीर्थंकर का नाम हैं-
(क) मुनिसुव्रतजी (ख) शान्तिनाथजी
(ग) नमिनाथजी (घ) धर्मनाथजी (ख)

(j) धर्म का मूल है -
(क) विनय (ख) ज्ञान
(ग) मान (घ) पाप (क)

प्र.2 निम्न प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' अथवा 'नहीं' में दीजिए :- 10x1=(10)

(a) अरिहंत किसी पर प्रसन्न होते हैं, नाराज होते हैं, वरदान देते हैं, अभिशाप देते हैं। (नहीं)
(b) धर्म साधना में जाति-पाति का भेद नही हैं। (हाँ)
(c) प्राकृत भाषा में 'क्ष' अक्षर होता है। (नहीं)
(d) सामायिक ग्रहण करने का पाठ करेमि भंते का पाठ है। (हाँ)
(e) धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व। (हाँ)
(f) इन्द्रियां पाँच होती हैं। (हाँ)
(g) भगवान महावीर भोगों में आसक्त थे। (नहीं)
(h) 'हो लाख बार प्रणाम तुम्हें' प्रार्थना पंक्ति के रचयिता श्री दर्शनमुनिजी म.सा. थे। (हाँ)
(I) चौबीस तीर्थंकरों में अन्तिम तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ थे। (नही)
(j) जुआ खेलना महापाप है। (हाँ)

प्र.3 मुझे पहचानो :- 10x1=(10)

(a)	मुझे राग-द्वेष का विजेता होने से जिन कहते हैं।	अरिहन्त/वीतराग
(b)	मैंने अगार एवं अणगार धर्म की प्ररूपणा की।	भगवान महावीर
(c)	मैं सामायिक पारने का पाठ हूँ।	एयस्स नवमस्स
(d)	मैं चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति करने का पाठ हूँ।	लोगस्स/उत्कीर्तन सूत्र
(e)	मैं गुरुवन्दन का पाठ हूँ।	तिक्खुत्तो का पाठ
(f)	मैं पच्चीस बोल का दूसरा बोल हूँ।	जाति पाँच
(g)	मेरा अभिग्रह राजकुमारी चंदनबाला ने पूरा किया।	भगवान महावीर
(h)	श्रीपाल, सुदर्शन और मयणरेहा ने मेरा जप कर आनंद पाया।	नवकार मंत्र
(i)	मैं आठवां तीर्थंकर हूँ।	चन्द्रप्रभ जी
(j)	मैं पाँच अभिगम में तीसरा अभिगम हूँ।	उत्तरासंग धारण

प्र.4 निम्न प्रश्नों के उत्तर एक-दो पंक्तियों में लिखिए 14x2=(28)

(a) गुरु हमें क्या देते हैं ?

उ. गुरु हमें ज्ञान रूपी चक्षु देते हैं।

(b) अणगार धर्म का दूसरा नाम क्या है ?

उ. साधु धर्म/ सर्व विरति धर्म/ निर्ग्रन्थ धर्म।

(c) एयस्स नवमस्स पाठ में बोली जाने वाली चार विकथाओं के नाम लिखिए।

उ स्त्रीकथा, भत्तकथा, देशकथा, राजकथा

(d) आधे अक्षर सम्बन्धी उच्चारण शुद्धि के कोई दो नियम लिखिए।

उ शब्द के प्रारम्भ में आधा अक्षर आवे तो उसके बाद वाले अक्षर पर जोर दिया जावें। जैसे स्तवन में 'त' पर।

शब्द के बीच में आधा अक्षर आवे तो उसके पहले वाले अक्षर पर जोर देकर बोला जावे। जैसे कल्प में 'क' पर जोर देकर बोलें। उज्जोयगरे में उज्जोयगरे 'उ' पर जोर देना चाहिये।

शब्द के बीच में दो आधे अक्षर होवें तो- पहले व पीछे के अक्षर पर जोर दिया जावे। जैसे मत्स्य में 'म' और 'य' पर।

(e) सामायिक किसे कहते हैं ?

उ. समभाव की साधना को सामायिक कहते हैं। अनुकूल वस्तु पर राग न करना व प्रतिकूल वस्तु पर द्वेष न करना अथवा राग द्वेष में सम रहने की साधना ही सामायिक है।

व्यवहार अर्थ में सावद्य योगों (पापकारी कार्य) का त्याग कर कम से कम एक मुहूर्त (48 मिनट) तक राग-द्वेष को जीतने की क्षमता का विकास करने की क्रिया सामायिक है।

(f) धर्म की एक उपयुक्त परिभाषा लिखिए।

उ. सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र रूप रत्नत्रय की आराधना को धर्म कहते हैं।

(g) जैन किसे कहते हैं ?

जिन के उपासक जैन कहलाते हैं, जिन राग-द्वेष के विजेता होते हैं, अत: राग-द्वेष के विजेता की उपासना से तात्पर्य राग-द्वेष को घटाना है। अर्थात् जो राग-द्वेष, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि विकारों को घटाने के लिए प्रयत्नशील रहता है, वह जैन है। जिस प्रकार शैव का देवता शिव, बौद्ध का बुद्ध तथा वैष्णव का विष्णु है उसी प्रकार जैन के परम आराध्य देव जिन होते हैं। अर्थात् अरिहन्त सिद्ध आदि जिन की उपासना करने वाले जैन कहलाते हैं।

जो प्रत्येक प्रवृत्ति में सावधानी एवं विवेक को प्रधानता देता है एवं जिनेश्वर देवों को आगे रखकर चलता है, वह जैन है।

(h) पांच शरीर के नाम लिखिए।

उ. 1. औदारिक 2. वैक्रिय 3. आहारक 4. तैजस 5. कार्मण।

(i) नवमें बोल के आधार पर दर्शन के भेदों के नाम लिखिए।

उ. 1. चक्षुदर्शन 2. अचक्षु दर्शन 3. अवधि दर्शन 4. केवल दर्शन

(j) रसनेन्द्रिय के पांच विषयों के नाम लिखिए।

उ. 1. तीखा, 2. कड़वा 3. कषैला, 4. खट्टा, 5. मीठा

(k) भगवान महावीर को केवल ज्ञान कहाँ पर प्राप्त हुआ ?

उ. जृंभिकाग्राम नगर के बाहर, ऋजुबालुका नदी के किनारे, श्यामाक गाथापति के खेत में, शाल वृक्ष के नीचे गोदोहिका आसन में।

(l) भगवान महावीर का अन्तिम चातुर्मास कहाँ हुआ ?

उ. पावापुरी में हस्तीपाल राजा की पौषधशाला में।

(m) उवज्झायाणं .... स्वस्थ बनाता है। रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

उ. उवज्झायाणं अज्ञान तिमिर, हर ज्ञान प्रकाश फेलाता है।

सव्वसाहूणं सब सुख दाता, तन-मन को स्वस्थ बनाता है।

(n) जो पाप .... नन्दन ज्ञानी की। रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।
उ. जो पाप मिटाने आया था, जिस भारत आन जगाया था।
उस त्रिशला नन्दन ज्ञानी की।

प्र.5 निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-तीन वाक्यों में लिखिए : - 14x3=(42)

(a) नमस्कार मंत्र में पहले अरिहंतों को नमस्कार क्यों किया गया है ?
उ अरिहन्त भगवान् चतुर्विध संघ रूप धर्म को प्रकट कर मोक्ष की राह दिखाने वाले और सिद्धों का स्वरूप बताने वाले होने से महान् उपकारी हैं। जन्म -मरण के भवबन्धन को समाप्त करने का उपाय अरिहन्त भगवान् ही बतलाते हैं, अतः नमस्कार मंत्र में पहले अरिहंतों को नमस्कार किया गया है।

(b) जैन साधु कितने महाव्रत का पालन करते हैं ? अर्थ सहित नाम लिखिए।
उ 1. अहिंसा- मन, वचन एवं शरीर से छोटे या बड़े, त्रस या स्थावर किसी भी प्रकार के जीव की हिंसा न करना, न करवाना तथा न करने वाले का समर्थन करना।
2. सत्य- मन, वचन,काया से न झूठ बोलना, न बुलवाना, न बोलने वाले का समर्थन करना।
3. अचौर्य- मन,वचन एवं शरीर से न चोरी करना, न करवाना, न करने वाले का समर्थन करना।
4. ब्रह्मचर्य- मन,वचन एवं शरीर से मैथुन - व्यभिचार न स्वयं सेवन करना, न करवाना, न करने वालों का समर्थन करना।
5. अपरिग्रह- मन, वचन एवं काया से परिग्रह - धनादि न स्वयं रखना, न दूसरों से रखवाना तथा न रखने वालों का समर्थन करना।

(c) तीर्थ किसे कहते हैं ?
उ संसार सागर में तिरने के साधन को तीर्थ कहते हैं। यह साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका के भेद से अथवा सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र एवं तप के भेद से चार प्रकार का होता है।

(d) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए-
उ सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअल सिज्जंस वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिं च वंदामि।।
कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणिसुव्वयं नमिजिणं च।
वंदामि रिट्ठणेमिं, पासं तह वद्धमाणं च।

(e) लोगहिआणं .... सरणगईपइट्ठाणं। रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।
उ लोगहिआणं, लोगपईवाणं, लोगपज्जोअगराणं, अभयदयाणं, चक्खुदयाणं,
मग्गदयाणं, सरणदयाणं, जीवदयाणं, बोहिदयाणं, धम्मदयाणं, धम्मदेसयाणं
धम्मनायगाणं, धम्मसारहीणं, धम्मवर चाउरंत, चक्कवट्टीणं। दीवोत्ताणं सरणगई पइट्ठाणं।

(f) जे मे जीवा .... किलामिया। रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।
उ जे मे जीवा विराहिया, एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अभिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइया, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया,

(g) तेरहवें बोले मिथ्यात्व के दस भेद में से प्रथम छः भेद लिखिए।
उ 1. जीव को अजीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व 2. अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व 3. धर्म को अधर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 4. अधर्म को धर्म श्रद्धे तो मिथ्यात्व,5. साधु को असाधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व, 6. असाधु को साधु श्रद्धे तो मिथ्यात्व।

(h) श्रोत्रेन्द्रिय के 3 विषय व 12 विकार लिखिए।
उ श्रोत्रेन्द्रिय के 3 विषयों के 12 विकार - जीव शब्द, अजीव शब्द और मिश्र शब्द। ये 3 शुभ, 3 अशुभ, इन 6 पर राग और 6 पर द्वेष, इस प्रकार 12 विकार।

(i) चौदह गुणस्थान के नाम लिखिए।
उ 1. मिथ्यात्व गुणस्थान 2. सास्वादन गुणस्थान 3. मिश्र गुणस्थान 4. अविरति सम्यग्दृष्टि गुणस्थान 5. देशविरति श्रावक गुणस्थान 6. प्रमादी साधु गुणस्थान 7. अप्रमादी साधु गुणस्थान 8. निवृत्ति बादर गुणस्थान 9. अनिवृत्ति बादर गुणस्थान 10. सूक्ष्म सम्पराय गुणस्थान 11. उपशान्त मोहनीय गुणस्थान 12. क्षीण मोहनीय गुणस्थान 13. सयोगी केवली गुणस्थान और 14. अयोगी केवली गुणस्थान

(j) भगवान महावीर के उपसर्गों को लिखिए।
उ ग्वाले के उपसर्ग, संगम देव के कष्ट, शूलपाणि यक्ष का परीषह, चण्डकौशिक का डंक, व्यन्तरी के उपसर्ग, गौशालक तथा लाटदेशीय यातनाएँ भगवान महावीर की समता एवं सहनशीलता के असाधारण उदाहरण हैं।

(k) कुव्यसन का अर्थ लिखिए। 'जुआ' कुव्यसन को विस्तार से समझाइए।
उ अर्थ- जिन कुटेवों, बुरी आदतों के कारण मनुष्य का पतन होता है, सदाचार एवं धर्म से विमुख बनता है, जिनके कारण मनुष्य का विश्वास नष्ट होता है, जो सज्जनों के लिए त्याज्य है, और जिन दुराचारों से मनुष्य जन्म बिगड़ कर नरकादि दुर्गति का पात्र बनता है, उन कुटेवों को ''व्यसन'' कहते हैं।
जुआ- शर्त लगाकर जो खेल खेला जाता है उसे 'जुआ' कहते हैं। जुआ खेलना महापाप है। जुए में आसक्तबना व्यक्तिधन का नाश करता है। वर्तमान युग में शेयरों के सट्टे ने व्यक्तिका कितना नुकसान किया है, कई व्यक्तियों को करोड़पति से रोड़पति बना दिया। घर बिक गये,जेवर बिक गये
इज्जत धूल में मिल गई। ताश-पत्ती, चौपड़, शतरंज आदि के माध्यम से पैसे लगाकर खेलना, सट्टा करना भी जुआ है। लॉटरी भी एक प्रकार का जुआ है। जिसे एक बार इसकी लत लग जाती है उसका सर्वनाश हुए बिना नहीं रहता।

(l) श्रीपाल .... मंगलकारी है। रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए।

उ श्रीपाल सुदर्शन मयणरेहा, जिसने भी जपा आनन्द पाया।
जीवन के सूने पतझड़ में, फिर फूल खिले सौरभ छाया।।
मन नन्दन वन में रमण करें, यह ऐसा मंगलकारी है।।

(m) विनय से क्या लाभ हैं ? कोई तीन लाभ लिखिए।

उ 1. विनय एक प्रकार का आभ्यन्तर तप है, जिससे कर्म क्षय होते हैं।
2. विनय आधि, व्याधि एवं उपाधि के लिए रामबाण औषधि है।
3. विनय हृदय को निर्मल एवं शांत बनाता है।
4. विनय से उच्च गौत्र का बंध होता है।
5. विनय से विपुल अर्थ वाले श्रुत ज्ञान की प्राप्ति होती है।
6. विनय से लोक में यश और कीर्ति प्राप्त होती है।
7. विनय से ऋद्धि सम्पन्न देवभव अथवा शाश्वत सुख रूप मोक्ष की प्राप्ति होती है। (इनमें से कोई तीन)

(n) भगवती सूत्र में बताये गये विनय के सात भेदों के नाम लिखिए।

उ 1. ज्ञान विनय, 2. दर्शन विनय, 3. चारित्र विनय, 4. मन विनय, 5. वचन विनय, 6. काया विनय, 7. लोकोपचार विनय